चन्दामामा
जुलाई १९६१

इनको लाल-शर पिलाइये

(डाबर बालामृत)

डाबर (डा० एस० के० बर्म्मन) प्राइवेट लि०, कलकत्ता-२९

WESTERN/D/69

चन्दामामा

★

जुलाई १९६९

★

कोलगेट से सांस की दुर्गंध रोकिये और दंत-क्षय का दिनभर प्रतिकार कीजिये !

क्यों कि : एक ही बार दांत साफ़ करने पर कोलगेट डेंटल क्रीम मुंह में दुर्गंध और दंत-क्षय पैदा करने वाले ८५ प्रतिशत तक रोगाणुओं को दूर कर देता है।

वैज्ञानिक परीक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि १० में से ७ लोगों के लिए कोलगेट सांस की दुर्गंध को तत्काल खत्म कर देता है, और कोलगेट-विधि से खाना खाने के तुरंत बाद दांत साफ़ करने पर अब पहले से अधिक लोगों का...अधिक दंत-क्षय रुक जाता है। दंत-मंजन के सारे इतिहास की यह बेमिसाल घटना है। केवल कोलगेट के पास यह प्रमाण है।

इसका पिपरमिंट जैसा स्वाद भी कितना अच्छा है—इसलिए बच्चे भी नियमित रूप से कोलगेट डेंटल क्रीम से दांत साफ़ करना पसंद करते हैं।

आप को यदि पावडर पसंद हो तो कोलगेट टूथ पावडर से भी ये सभी लाभ मिलेंगे—एक डिब्बा महीनों चलता है।

ज़्यादा साफ़ व तरोताज़ा सांस और ज़्यादा सफ़ेद दांतों के लिए...

दुनिया में अधिक लोगों को दूसरे टूथपेस्टों के बजाय कोलगेट ही पसंद है।

DC.G.38 HN

पालन पोषण सही कीजिए ;
बच्चों को बोर्नविटा दीजिए !

LIFEBUOY
for health

चिर शान्ति के लिये बच्चों को प्रेम का पाठ पढ़ाइये

अगर हमें सच्ची शान्ति चाहिये और यदि हमें युद्ध की वहशत को जड़मूल से नष्ट करना है तो शुरुआत हमें बच्चों से करनी होगी। उनके फूल जैसे कोमल मनों को यदि स्वाभाविक वातावरण में बढ़ने दिया जाये....तो चारों ओर प्रेम और शान्ति का एक ताना [illegible] सकेगा। और, एक दिन ऐसा आयेगा, जबकि सारी दुनिया, एक छोर से दूसरी छोर तक, उस प्रेम और शान्ति की डोर में बंध जायेगी, जिसके लिये आज सोते और जागते, सारा संसार तरसता दिखाई देता है।

महात्मा गांधी

MAHATMA GANDHI
BIRTH CENTENARY
OCT. 2, 1968 TO
FEB. 22, 1970
महात्मा गांधी
जन्म शताब्दी
अक्तूबर 2, 1968 से
फरवरी 22, 1970

अब!
सिर्फ़ १२ ही दिनों में
अधिक सफ़ेद दाँत!

चन्दामामा
संचालक: चक्रपाणी
चन्दामामा की दिन ब दिन लोकप्रियता बढ़ते देख हमें बड़ी प्रसन्नता हो रही है। चन्दामामा में प्रकाशित कहानियों की प्रशंसा करते हुए प्रति दिन हमारे पास कई पत्र आते हैं। हम इस पत्रिका को और लोकप्रिय बनाने के लिए पाठकों के विचार जानना चाहते हैं। पाठक यदि अपने सुझाव और सलाहें देंगे तो हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। इसलिए इस पत्रिका को और सुन्दर बनाने के लिए हम पाठकों के सुझावों का स्वागत करेंगे।
वर्ष: २० जुलाई १९६९ अंक: ११

कायर

छत्रपुर के राजा के सुभांग नामक एक पुत्र था। बचपन से ही उस में कायरता के लक्षण दीखने लगे। वह हाथियों का चिंघाड़ सुनता तो चिल्ला कर रो पड़ता। बाघ का शावक दिखाई देता तो आपाद-मस्तक कांप उठता। उसकी इस कायरता को देख कुछ लोग कहते–"यह बड़ा होने पर राज्य का शासन कैसे करेगा? दुश्मन से कैसे युद्ध करेगा?"

कुछ लोग इस प्रश्न के उत्तर में कहते–"अभी तो यह बच्चा है। जब यह बड़ा होगा और गद्दी पर बैठेगा तब तक यह हिम्मतवर बन जायगा।"

सुभांग जवान हो गया। ऊँचा क़द, देखने में सुन्दर, अपने पिता से भी बढ़कर सुगठित शरीर और राजसी ठाठ उसमें भरा था। देखने में वह वीर जैसा लगता था; लेकिन उसकी कायरता दिन ब दिन बढ़ती ही गयी। उसकी आकृति देख लोग यही कहते कि "हमारे युवराज के हाथों में सारे डाकू व लुटेरे मार खाकर भाग जायेंगे।"

आख़िर एक दिन जब लुटेरों ने राज्य पर हमला किया तो लोगों ने देखा कि युवराज का कहीं पता नहीं है। बड़े राजा ने ही सिपाहियों को ले जाकर लुटेरों का सामना किया और उनसे युद्ध करके उनको भगा दिया। कुछ समय बाद सुभांग राजधानी में लौटा और उसने डींग मारना शुरू किया कि वह शिकार खेलने गया था और सिंहों से लड़कर वापस लौटा है। फिर भी उसकी बातों पर किसी ने विश्वास नहीं किया। सब कोई उसे "कायर" कहकर पुकारने लगे। राजमहल में उसकी जरा भी इज्जत नहीं होती थी।

जोगेन्द्र प्रसाद

इस तरह अपमान सहना शुभांग के लिए कठिन हो गया। एक दिन वह घुड़साल से बढ़िया घोड़ा लेकर, सब की आँख बचाकर जीने की इच्छा से अपने राज्य को छोड़कर चला गया। जंगल से होकर यात्रा करते समय उसने हिंस्र पशुओं के डर से जो यातनाएँ भोगीं, वर्णन के बाहर हैं।

आखिर वह अस्तगिरि नामक नगर में पहुँचा। जब सुभांग घोड़े पर सवार हो राजपथ से जा रहा था, तब अस्तगिरि की राजकुमारी चारुमति ने अंतःपुर की खिड़की में से देखा। उसने अपनी सखियों से कहा—"वह आनेवाला युवक देवलोक से उतर आये इंद्र जैसे लगता है, वह कोई मामूली आदमी नहीं। तुम लोग उसका पता लगाकर लौटना।" चारुमति बड़ी सुंदर और ऊँचे क़द की युवती थी। उसने सुभांग जैसे व्यक्ति को कभी नहीं देखा था।

सखियों ने लौटकर उसे समाचार दिया—"राजकुमारी, आपने जिस युवक को देखा, वह छत्रपुर के महाराजा का इकलौता पुत्र है।" चारुमति ने तुरंत अपने पिता के पास जाकर निवेदन किया कि वे छत्रपुर के

युवराज का आदर सहित स्वागत करे और उचित रूप में अतिथि-सत्कार करें। क्योंकि वह उस युवराज के साथ विवाह करना चाहती है। अस्तगिरि के राजा ने बड़ी ख़ुशी से सुभांग का स्वागत किया। अपनी पुत्री के साथ उसका परिचय कराया। उसको जब मालूम हुआ कि सुभांग भी चारुमति से प्रेम करता है, तब उन दोनों का विवाह किया।

अस्तगिरि के राज्य पर भी जब-तब डाकू और लुटेरे हमला किया करते थे। सुभांग के विवाह होने के कुछ दिन बाद अस्तगिरि के आस-पास के गाँवों पर

लुटेरों ने हमला किया और घर जलाकर मवेशियों को भगा ले गये ।

चारुमति को अपने पति की वीरता पर अपार विश्वास था। इसलिए उसने कहा– "आप तुरंत रवाना होकर लुटेरों का अंत करके लौट आइये । सिपाही सब तैयार हो रहे हैं। लीजिये यह आपके कवच, ढाल व तलवार!"

सुभांग का चेहरा सफ़ेद पड़ गया। उसने कहा–"मुझसे ऐसी बातें न कहो। लूटेरों से मैं युद्ध करूँ? घायल न हो जाऊँगा? जान भी निकल सकती है। मुझे लड़ाई-झगड़ों से डर लगता है।"

चारुमति अपने पति की बातें सुनकर चकित हो गयी। उसे बिलकुल इस बात का संदेह ही न था कि उसका पति ऐसा कायर है। वह सोचने लगी कि सुभांग मजाक़ कर रहा है। परंतु उसके चेहरे पर भय और घबराहट साफ़ झलक रही थीं।

चारुमति ने चुपचाप कवच धारण किया। हाथ में तलवार और ढाल लेकर घर से निकल पड़ी। उसके पति के इंतज़ार में खड़े घोड़े पर सवार हो सरपट उसे दौड़ाने लगी। युद्ध के लिए तैयार खड़े सिपाहियों ने उसका अनुसरण किया।

लुटेरों के साथ युद्ध हुआ। उसमें कुछ लोग मर गये और कुछ लोग भाग गये। मवेशियों को छुड़ाकर चारुमति अपने सैनिकों के साथ राजधानी को लौट आयी।

नगर के लोगों ने सोचा कि राजा के दामाद शुभांग ने ही लुटेरों को भगा दिया है। इसलिए उसका अभिनंदन करने राजमहल के पास जमा हुये। चारुमति घोड़े से उतर कर हाथ हिलाते अंत:पुर की ओर दौड़ पड़ी।

शुभांग अपने कमरे के एक कोने में बैठा था। चारुमति ने अपना कवच खोलते

हुये कहा–"आप इसे पहन लीजिये। आपका अभिनंदन करने जनता बाहर खड़ी है।" ये शब्द कहते उसने खुद शुभांग को कवच पहनाया।

भीड़ ने शुभांग को देख जयनाद किये। राजमहल में भी किसी को यह मालूम न था कि लुटेरों से चारुमति ने युद्ध किया है, शुभांग ने नहीं। लेकिन चारुमति के भाइयों में से छोटे को संदेह हुआ और उसने बड़े भाई से कहा–"शुभांग ने लुटेरों से युद्ध नहीं किया है।"

"अरे, चुप रहो, कोई सुने तो हँसे।" बड़े ने छोटे का मुँह बंद कराया।

"फिर कभी लड़ाई होगी तो मैं यह साबित करूँगा कि मैंने जो कहा, वही सत्य है।" छोटे ने कहा।

इस घटना के कुछ ही दिन बाद फिर लुटेरों ने राज्य पर हमला किया। चारुमति ने अपने पति को फिर एक बार युद्ध में भेजने का प्रयत्न किया। लेकिन उसका प्रयत्न सफल न हुआ। इस बार भी उसने स्वयं कवच धारणकर हथियार लेकर लुटेरों का सामना किया और उन्हें भगाकर लौट आयी।

चारुमति राजमहल में पहुँच कर जब घोड़े से उतरने लगी तब उसके छोटे भाई ने

उसके पैर पर छोटा-सा घाव कर दिया। इस पर ध्यान दिये बिना ही वह भीतर चली गयी, अपना कवच उतारकर पति के हाथ में देते समय देखती क्या है, उसके पैर पर घाव है, तब वह अपने पति से बोली–"आप अपने पैर पर भी एक घाव कर लीजिये, वरना लोगों को सचाई का पता लग जायगा।"

"बाप रे बाप, घाव? खून नहीं निकलेगा?" शुभांग ने कहा।

शुभांग रोक ही रहा था कि चारुमति ने उसके पाँव पर तलवार से घाव कर डाला। शुभांग चिल्लाकर विकल हो गया।

"इस छोटे से घाव से घबराने की कोई जरूरत नहीं। लोग इसे देख यही सोचेंगे कि आपने ही लुटेरों का सामना किया है। अगर यह झूठा साबित हो जाय तो आप का कैसा अपमान होगा, सोच लीजिये।" चारुमति ने समझाया।

शुभांग मन ही मन अपनी पत्नी को कोसते कवच धारण कर लोगों के सामने गया, उन्हें अपना चेहरा दिखा कर उनकी प्रशंसाएँ प्राप्त कर लौट आया।

चारुमति के हाथों में जो डाकू हार गये वे एक हफ़्ता पूरा होने के पहले ही अपने राजा व सेना को साथ लेकर फिर लड़ाई करने आये।

"इस बार भयंकर युद्ध होगा। हमारी सेनाओं को ले जाकर आप को खुद इस बार युद्ध करना ही होगा। पहले की तरह इस बार जनता को भुलावे में डालना संभव नहीं है।" चारुमति ने शुभांग से कहा।

"मुझसे लड़ाई की बात मत करो। यह कहाँ का न्याय है कि हमारी सेनाओं का सेनापतित्व मुझे ही करना है? तुम अपने भाइयों में से किसी को सेनापति बनाओ। क्या तुम चाहती हो कि

में युद्ध में जाकर मर जाऊँ?" शुभांग ने कहा ।

चारुमति ने थोड़ी देर तक सोचकर कहा–"तब तो एक काम कीजिये । आप कवच धारण कर घोड़े पर सवार हो पहले जाइये और तालाब के पास उद्यान में मेरा इंतज़ार कीजिये । मैं दूसरे रास्ते से आकर आप से मिलूँगी और आपका कवच मैं पहन लूँगी । सेनाओं को मैं आदेश दूँगी कि आप के पीछे निकलकर आवे ।"

यह प्रबंध शुभांग को अच्छा लगा । अगर उसकी पत्नी न भी आवे, वह बगीचे में छिप कर लड़ाई से बच सकता है । राजमहल में रहने से ऐसा मौक़ा न मिलेगा । कोई न कोई उसे वहाँ पर युद्ध के लिए प्रेरित कर सकता है ।

शुभांग कवच धारण कर बाहर आया । उसके पीछे आकर चारुमति ने उसे घोड़े पर सवार होने दिया । तब चाबुक लेकर घोड़े की पिछली टांगों पर दे मारी । चोट खाकर घोड़ा हवा से बात करने लगा । सेना ने शुभांग के घोड़े को देखते ही उसका अनुकरण किया । शुभांग को कहीं घोड़े पर से उतरने व छिपने का मौक़ा नहीं मिला । वह सीधे दुश्मन के सामने जा पहुँचा ।

दोनों सेनाओं के बीच भयंकर लड़ाई हुई । कायर बनकर कई बार भागनेवाले शुभांग ने प्रलय काल के यम की भांति दुश्मन की फौज़ का नाश किया । सैनिकों से महान वीर के रूप में प्रशंसा पायी । विजयी होकर लौटा ।

अपने पति में यह परिवर्तन देख चारुमति को आश्चर्य नहीं हुआ । उसने पहले ही समझ लिया था कि वह केवल भय की कल्पना करके डरता है, लेकिन खतरे से नहीं । इसके बाद शुभांग ने कई युद्ध करके खूब प्रशंसा पायी और अपने ससुर व पिता की प्रतिष्ठा बढ़ाई ।

सच जैसा झूठ

एक राजा ने यह ढिंढोरा पिटवाया कि जो व्यक्ति सच जैसा झूठ कहेगा, उसे सोने का आम दिया जायगा।

सोने का आम पाने के लोभ से कई लोग राजमहल के पास दौड़े-दौड़े आये। सब ने तरह तरह के झूठ बताये। लेकिन राजा को उनमें से कोई झूठ पसंद न आया। उनमें कुछ झूठ सच भी हो सकते थे, बाक़ी सब सरासर झूठ ही थे। इसलिए राजा ने सोने का आम किसी को नहीं दिया।

एक दिन एक भिखारी बड़ा घड़ा लेकर राजा के पास आया।

"तुमको क्या चाहिये?" राजा ने भिखारी से पूछा।

"आप से मुझे इस घड़े भर सोना मिलना है, दिलाइये।" भिखारी ने जवाब दिया।

"यह झूठ है। अरे वाह, तुम मुझ को ही झूठा बनाने चले? मुझसे तुमको कुछ नहीं मिलना है।" राजा ने उत्तर दिया।

"झूठ है, तब तो वह सोने का आम मुझे दे डालिये।" भिखारी ने कहा।

राजा ने खुश होकर उसे सोने का आम दे दिया।

शिथिलालय

[१८]

[नागमल्ली को उठा ले जानेवाले शिथिलालय के पुजारी ने यह शर्त रखी कि अगर उसे शिवाल ताड़पत्र सौंप देगा तो वह नागमल्ली को मुक्त करेगा। शिवाल ने उसकी शर्त मान ली। चोरों के निवास का पता लगाकर शिखिमुखी जब लौट रहा था, तब उसकी आहट सुनकर सबरगीध भाला चमकाते उस पर कूदने को तैयार हो गया। बाद...]

शिखिमुखी पल भर में एक निर्णय पर पहुँचा। वह चाहता तो सबर गीध के पीछे से जाकर उसके सर पर प्रहार कर उसे मार डाल सकता है। पर इससे पुजारी के दल को यह संदेह होगा कि उसके गुप्त निवास का पता दुश्मन को लग गया है। ऐसी हालत में पुजारी नागमल्ली को कहीं दूसरी जगह ले जाकर छिपा सकता है...या उसकी हत्या भी करे तो कोई आश्चर्य की बात न होगी। नागमल्ली को बचाना बहुत ज़रूरी है।

यह सोचकर शिखिमुखी ने सबरगीध की आँख बचाकर भागने की एक चाल चली। वह उस झाड़ी में से पास की झाड़ियों में रेंगते जानवर की तरह छलांग मारते, चीते की तरह गरजते आगे बढ़ा। उस गर्जन को सुन सबरगीध डरकर रुक गया,

पीछे की ओर क़दम बढ़ाते काँपते स्वर में मन ही मन गुनाने लगा–"ओह, यह तो चीता है, मैंने आदमी समझा! मुझे बचकर भाग जाना चाहिये।"

शिखी ने सवरगीध को बड़ी आसानी से धोखा दिया, इस पर वह खुश होते और ज़ोर से गर्जन करते झाड़ियों में से घने जंगल में भाग खड़ा हुआ। बाहर किसी जानवर का गर्जन सुनकर पुजारी ने सवर गीध की मदद के लिए उसी समय दो चोरों को भेजा।

वे दोनों चोर तलवार चमकाते सवरगीध के निकट दौड़े आये और बोले–"चीता कहाँ पर है? जल्द बताओ, उसका खात्मा करेंगे।"

सवरगीध होश संभालते ज़ोर से हँस पड़ा और बोला–"अबे, चीते को क्या जान से भागने देता? वह मुझ पर झपट्टा मारनेवाला था कि मैंने उस पर भाला चलाया। चोट खाकर वह दूर चित जा गिरा और उठकर भाग गया।"

"शहबाश! हिम्मत में तुम हमारी बराबरी करते हो! आ जाओ। पुजारी साहब तुमको कोई ख़तरे का काम सौंपना चाहते हैं।" चोरों में से एक ने कहा।

"ख़तरे का काम? हूँ, मुझे डर ही क्या? साहब आदेश दे तो मैं आकाश में उड़ सकता हूँ। मैं मानव गीध हूँ, जानते हो न?" सवरगीध ने डींग मारी।

"हम क्यों नहीं जानते? ना समझ लोग तुमको गप्पेबाजी करनेवाला मानते हैं। पुजारी साहब के मंत्रों की ताक़त क्या हम नहीं जानते? तुम उनके पट्ट शिष्य हो!" दूसरे चोर ने कहा।

"अरे, ये कैसी अनाप-शनाप की बातें करते हो! अच्छा हुआ, सवरगीध की गर्दन को चीते ने उड़ा नहीं दिया? वह नशे में हुआ मालूम होता है! बकवास बंद

करने को कह दो।" शिथिलालय के पुजारी ने क्रोध भरे स्वर में डाँटा।

सवरगीध को चकमा देकर शिखिमुखी जंगल में भाग गया। मशालों की रोशनी को देख घाटी के किनारे स्थित झोंपड़ी को पहचाना। वहाँ पहुँचते ही उसे शिवाल और सवरगीध दिखायी पड़े। शिखिमुखी ने नागमल्ली को बंदी बनाने का समाचार सुनाकर उन्हें सुझाया कि बिना शोरगुल मचाये उस झोंपड़ी को घेरने से हम लोग इसी समय नागमल्ली को छुड़ा सकते हैं और पुजारी को भी बंदी बना सकते हैं।

शिवाल ने सवरं नेता लट्टूसिंह से परामर्श करके अपने पुत्र के कहे अनुसार उसी वक़्त हमला करने का निर्णय किया। शिखी ने अपने पिता के मुँह से ताड़पत्रों को पीपल के पेड़ से लटकानेवाली बात सुनी। उसने सावधानी के लिए पीपल के पेड़ के आस-पास पहरा देने दो शबरों को भेज दिया।

इसके बाद दस हिम्मतवर शबर युवकों तथा विक्रमकेसरी को साथ लेकर शिखिमुखी शिथिलालय वाले पुजारी की झोंपड़ी की ओर तेजी से रवाना हुआ। आधे घंटे में

वहाँ पहुँच कर देखता क्या है कि झोंपड़ी के आगे फैली झाड़ियों के सामने एक चोर पहरा दे रहा है। उस सुनसान झोंपड़ी की खिड़की में से मशाल की रोशनी बाहर फूट रही थी।

उस पहरेदार को देखते ही शिखिमुखी को लगा कि पुजारी ने शायद खतरे को भांप कर पहरा बिठा दिया हो। पुजारी कपटी है। इसलिए यह सोचकर शिखी डर भी गया कि कहीं पुजारी ने नागमल्ली को दूसरी जगह पहुँचा दिया हो। चाहे जो भी हो, पहले उसे झोंपड़ी को घेर लेना है। शिखी ने अपनी योजना विक्रमकेसरी को

सुनायी । पहरेदार अगर सूचना दे तो झोंपड़ी में रहनेवाले सब भाग सकते हैं । इसलिए पहरेदार का इस तरह अंत करना है कि वह चूं तक न कर सके ।

शिखी ने अपने अनुचरों को थोड़ी दूर पर खड़ा कर दिया । वह झाड़ियों के पीछे रेंगते पहरा देनेवाले के पीछे पहुँचा । शिखिमुखी ने चुपके से भाले की मूठ से ज़ोर से पहरेदार के सर पर दे मारा । वह जब नीचे गिरने लगा तब उसके चिल्लाने से रोकने के ख़्याल से उसका गला दबाना चाहा । लेकिन पहरेदार गिरते हुए ज़ोर से कराह उठा ।

पहरेदार की कराहट सुनकर शिथिलालय के पुजारी ने अनुमान लगाया कि कोई ख़तरा पैदा होनेवाला है । यह सोचकर उसने सवरगीध से कहा—"अरे गीध, सुनो! हमें तुरंत यह घर छोड़कर भागना है । मेरे पीछे चलो ।" यह कहते झोंपड़ी के पिछवाड़े का दर्वाज़ा खोल पुजारी जंगल की ओर भाग खड़ा हुआ । सवरगीध भी उसके पीछे चल पड़ा ।

शिखिमुखी ने पहरेदार की चिल्लाहट से अनुमान लगाया कि उसकी योजना बेकार गयी । तुरंत उसने अपने अनुचरों को झोंपड़ी को घेरने का आदेश दिया । विक्रमकेसरी, सवर तथा शबर युवकों ने झोंपड़ी को घेर लिया । शिखिमुखी झोंपड़ी के आगे के द्वार से तथा विक्रमकेसरी पिछले दर्वाज़े से तलवार उठाये झोंपड़ी में क़दम रखते गरज उठे—"सब लोग हथियार डाल दो, वरना प्राणों की ख़ैर नहीं!"

लकड़ी की मेज़ पर बैठी नागमल्ली उन दोनों की ओर अचरजभरी दृष्टि से देखते बोली—"वाह, आप लोग भी कैसे अक़्लमंद हैं? आप जिस पुजारी को पकड़ना चाहते हैं, वह अभी अभी सवरगीध को साथ

लेकर भाग गया है। देखिये, कोने में पड़े वे तीनों बदमाश नशे में मदहोश हैं। भूकंप भी आ जावे तो ये भागने का नाम तक न लेंगे।"

शिखिमुखी नागमल्ली के निकट पहुँच कर मौनता के साथ उसके बँधन खोलने लगा। विक्रम ने शिखी के पास पहुँचकर पूछा—"क्यों शिखी? पुजारी का पीछा करें? उसने एक और दफ़ा हमें दगा दिया है।"

"वह दिन भी आयगा, जब वह हमारे हाथों में बंदी होकर रहेगा! इस घने जंगल में, धुँधली चाँदनी में हम उसे कहाँ खोज सकते हैं? यूँ ही पुजारी का पीछा करने से मेहनत को छोड़ कोई फ़ायदा न होगा। सवर नेता लट्टूसिंह की लड़की को उसे सौंप देने से हमारी जिम्मेदारी पूरी होगी। इसके बाद हम आराम से तुम्हारे दादा के बारे में और शिथिलालय के पुजारी के रहस्य जानने के लिए ब्रह्मपुत्र की घाटियों में चले जायेंगे।" शिखिमुखी ने समझाया।

नागमल्ली के बंधन खुलते ही वह उठ खड़ा होना चाहती थी, किंतु खून के जमने के कारण वह लड़खड़ायी। फिर मेज़ पर बैठते हुये बोली—"इस शबर युवक को अभी तक यह मालूम न हो सका कि शिथिलालय का पुजारी कैसा चालाक है! वह आप लोगों से पहले ब्रह्मपुत्र की घाटियोंवाले शिथिलालय में पहुँच जायगा।"

"वहाँ तक पहुँचने के लिए आवश्यक रास्तों के चिह्न और नक़्शे हमारे पास हैं। तुम चिंता न करो। मैंने सारी बातें पहले ही सोच रखी हैं। उस रास्ते का पता लगाने के लिए ही पुजारी ने उन ताड़पत्रों को पाने की जी जान से कोशिश की। वे ताड़पत्र इस जन्म
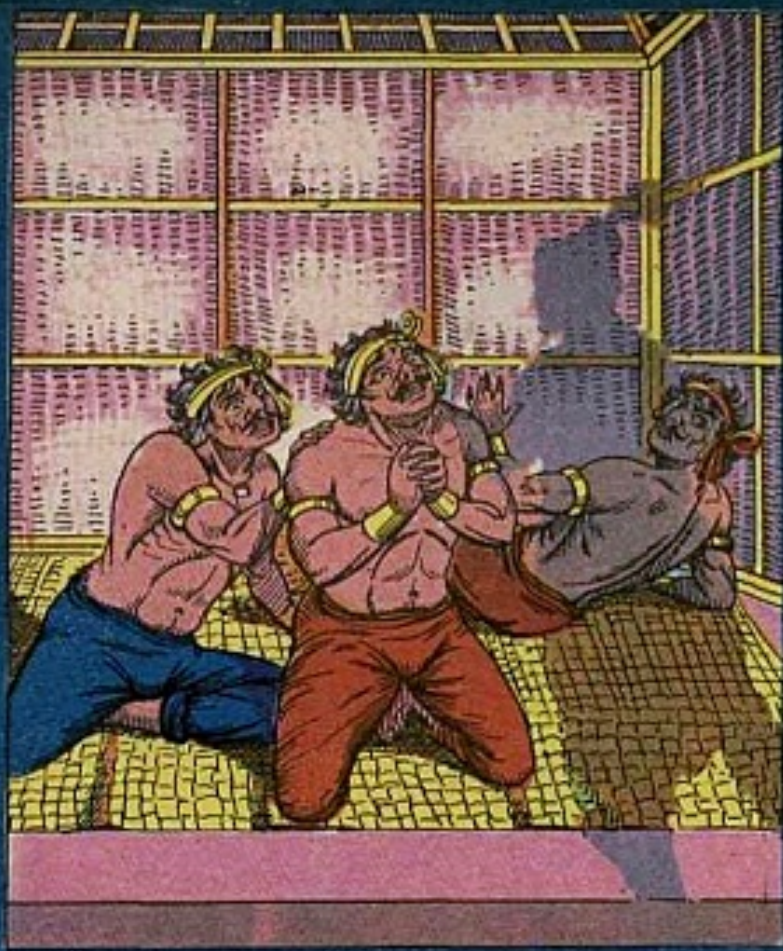
में उसके हाथ न लगेंगे।" शिखिमुखी ने कहा।

इतने में झोंपड़ी के एक कोने में सोने वाले चोरों में से एक ने जंभाइयाँ लेते हुये आँखें खोलीं। सामने शिखिमुखी आदि को देख भय से काँपते हुये अपने साथियों को जगाना चाहा। पर वे हिले-डुले नहीं। शिखिमुखी ने उनके निकट पहुँचकर भाले की मूठ से एक के सर पर दे मारा और कहा—"अब तुम लोग जाग जाओ, तुम्हारा मालिक भाग गया है। तुम तीनों के सर पीपल के पेड़ पर लटकवाने जा रहे हैं।"

बाक़ी दोनों चोर शिखिमुखी को देख घबरा गये। शिखी ने फिर उनके सर क़ाट देने की चेतावनी दी। तीनों चोर उसके पैरों पर गिरकर गिड़गिड़ाने लगे—"सरकार, उस दुष्ट पुजारी का दिया हुआ सारा धन आपको देंगे। हम को जान से छोड़ दीजिये।"

"देखें कितना धन दिया है?" शिखी ने पूछा।

चोर एक दूसरे के चेहरे देखते कहीं ताकने लगे। इसे भांप कर शिखिमुखी बोला—"चौथे चोर को ढूंढ रहे हो न? उसके आने पर ही छिपाया धन बाहर निकाला जा सकता है क्या? अच्छा, वह तो अब तक नरक का मेहमान बन गया होगा। उसका हिस्सा भी तुम्हीं लोग बाँट लो और उससे कहीं ज़मीन ख़रीदकर आज से अच्छा बर्ताव करो। फिर कभी कहीं चोरी की और मुझे पता चला तो तुम्हारी जान की ख़ैर न होगी।"

शिखिमुखी के साथ नागमल्ली, विक्रम और उसके साथी बाहर आये। तब विक्रमकेसरी ने शिखिमुखी से कहा—"शिखी, पुजारी तथा चोरों के लिए आश्रय बनी इस झोंपड़ी को इसी रूप में रहने

देना मुझे पसंद नहीं। फिर एक बार वे लोग यहाँ पहुँच कर चोरियाँ कर सकते हैं। इसे जला देना उचित होगा।"

शिखिमुखी ने सर हिलाते कहा—"जैसी तुम्हारी इच्छा!" विक्रमकेसरी झोंपड़ी के भीतर गया। एक जलते मशाल को लाया। झोंपड़ी के चारों ओर आग लगा दी। देखते-देखते सारी झोंपड़ी धक् धक् करते जलने लगी। तब शिखिमुखी और उसके साथी मारे खुशी के तालियाँ बजाते घाटी की ओर चल पड़े। तीनों चोर बचे-खुचे सामान व बर्तन जल्दी-जल्दी बाहर लाने लगे।

घाटी के समीप में एक झोंपड़ी के पास शिखिमुखी का दल शिवाल और लट्टूसिंह के दल से जा मिला। सवर लट्टूसिंह को अपनी इकलौती खोयी हुई बेटी को पाकर जो खुशी हुई, वह वर्णन के बाहर की बात है। उसने अपनी बेटी को पुचकारते कहा—"मैंने सोचा था कि वह कुत्ता पुजारी तुमको उत्तर की ओर भगा ले गया होगा। मेरी क़िस्मत बली थी, इसलिए तुम फिर मुझे मिल गयी। उस पागल कुत्ते पुजारी को पकड़कर उसकी बोटी-बोटी तोड़ न बैठूं, मेरा नाम सवर लट्टूसिंह नहीं।"

शिवाल ने मुस्कुराते हुये कहा—"लट्टूसिंह, हम इस तरह की प्रतिज्ञाएँ करके उनके पालन करने की हालत में नहीं हैं। हम बूढ़े होते जा रहे हैं। शिखिमुखी और विक्रमकेसरी पहले शूरसेन देश में जाकर विक्रमकेसरी के पिताजी से बात करेंगे। वहाँ से शायद ब्रह्मपुत्र नदी की घाटियों में जायेंगे। अगर उनको कहीं शिथिलालय का पुजारी दिखाई दिया तो उस दुष्ट को पकड़कर हाथ-पैर बांधे तुम्हारे पैरों पर डाल देंगे। तब तुम उसका अपनी इच्छा के अनुसार वध कर सकते हो।"

शिवाल की बातों पर सबको हँसी आयी। इसके बाद सूर्योदय के होते ही शिवाल और लट्टूसिंह अपने अनुचरों को लेकर सबर बस्ती में गये। वहाँ पर दिन और रात दावत और मनोरंजन के साथ मजे में वक़्त बिता कर शिवाल दूसरे दिन सवेरे शबर बस्ती के लिए रवाना हुआ। तब नागमल्ली ने शिखिमुखी को एक वृक्ष की आड़ में बुलाकर कहा—"जिस दुष्ट पुजारी ने मेरे हाथ-पैर बाँध कर मुझे सताया, उसकी चोटी मुझे चाहिये।"

"अगर वह उस घाटी में दिखायी दिया तो मैं क़सम खाकर कहता हूँ कि उसका सर काटकर तुमको सौंप दूँगा। लेकिन मैं यह नहीं बता सकता कि हमारे लौटने में कितना समय लगेगा। इस बीच अगर तुम किसी दूसरे सबर युवक की औरत बनोगी तो उसके द्वारा मुझ पर भाला उठाने का खतरा है।" शिखिमुखी ने कहा।

ये बातें सुनकर नागमल्ली लज्जा और क्रोध से भर उठी। उसने सर झुकाकर जमीन की ओर देखते कांपते स्वर में जवाब दिया—"मेरे साथ कोई सबर क्या, दूसरा शबर युवक भी शादी नहीं कर सकता!"

"मतलब...मेरी समझ में नहीं आता है।" ये शब्द कहते शिखिमुखी ने भोलेपन से भरी दृष्टि नागमल्ली पर डाली।

नागमल्ली कुछ कहने ही जा रही थी कि इतने में शिवाल का कंठ सुनाई दिया—"ऊ! अब सब लोग तैयार हो जाइये। शिखी कहाँ पर है?"

नागमल्ली तुरंत अपने घर की ओर दौड़ पड़ी। लाल कुत्ता भूँकते शिखिमुखी के पास आया। शिखी अपने पालतू कुत्ते का सर सहलाते, नागमल्ली की बातों का भाव समझने की चेष्टा करते अपने पिता की ओर आगे बढ़ा। (और है)

अमानवीय शक्तियाँ

हठी विक्रमादित्य पेड़ के पास लौट आया; शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने यों कहा– "राजन, कुछ लोग बड़ी मेहनत के साथ प्राप्त की हुई अमानवीय शक्तियों का उपयोग अपनी भलाई के लिए करने का प्रयत्न करके उसमें असफल हो कभी कभी अपमान के शिकारी होते हैं। इसके उदाहरण स्वरूप मैं तुमको प्रचण्ड नामक व्यक्ति की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनो!"

बेताल यों कहने लगा :–"पुराने ज़माने में अंवती नगर में प्रचण्ड नामक एक अनाथ बालक था। वह भीख माँगकर पेट भरता था। इस तरह उसने पंद्रह साल तक अपमानजनक जीवन बिताया। एक दिन उस नगर में एक सिद्ध से उसकी भेंट हुई। शाम तक वह सिद्ध के पीछे

वेताल कथाएँ

घूमता रहा और रात के होते ही वह सिद्ध के साथ एक जंगल में चला गया।

सिद्ध क्षुद्र देवताओं का उपासक था। प्रचण्ड ने बड़ी श्रद्धा व भक्ति के साथ सिद्ध की सेवा-शुश्रूषा की। इस पर खुश हो सिद्ध ने प्रचण्ड को एक मंत्र का उपदेश दिया। इसके बाद वह गुरु से आज्ञा लेकर अकेले जंगलों में घूमते, क्षुद्र देवताओं की कृपा प्राप्त करने के लिए श्मशानों में उनकी पूजा करने लगा।

क्षुद्र देवताओं के अनुग्रह से प्रचण्ड को एक अमानवीय शक्ति प्राप्त हुई। वह किसी का चेहरा देखता, तो उस शक्ति के बल पर यह कह पाता था कि वह आदमी एक महीने के भीतर मरता है कि नहीं।

इस अमानवीय शक्ति के द्वारा प्रचण्ड गाँवों में घूमते वहाँ के अमीरों के सामने अपनी विद्या का प्रदर्शनकर उनसे थोड़ा-बहुत पारितोषिक पाया करता था। इससे उसे खाने-पीने की कमी तो न थी, लेकिन लोग उसका आदर बिलकुल न करते थे।

प्रचण्ड ने यह बात समझ ली। इसलिए उसने निर्णय किया कि किसी राजा के सामने अपनी शक्ति का प्रदर्शन करके बड़ा इनाम प्राप्त करे, तब शादी करके गृहस्थ जीवन बिताना उचित है।

यह निर्णयकर प्रचण्ड अवंती नगर में गया। राजदरबार में पहुँचकर उसने अपनी शक्ति का परिचय दिया और कहा– "महाराज, आप चाहें तो मेरी इस शक्ति की परीक्षा ले सकते हैं।" लेकिन अवंती का राजा ऐसी शक्तियों पर विश्वास न करता था, उल्टे ऐसे लोगों से वह घृणा भी करता था। इस वजह से प्रचण्ड को राजा के द्वारा ही नहीं, बल्कि दरबारियों से भी अपमानित होना पड़ा।

प्रचण्ड के मन में राजा से बदला लेने की तीव्र इच्छा पैदा हुई। दरबार में पहुँचते ही उसने राजा का चेहरा देखने पर समझ लिया था कि आज से पच्चीस दिनों के अंदर राजा की मौत होनेवाली है। राजा अगर उसके साथ अच्छा व्यवहार करता तो वह अपनी शक्ति का प्रदर्शन करके, एकांत में उसकी मौत का समाचार सुनाता और इन पच्चीस दिनों के अन्दर राजकाज ठीक से संभालने की सलाह भी देना चाहता था।

अवंती नगर के राजा से अपमानित हो प्रचण्ड पड़ोसी राज्य मणिपुर में गया और मणिपुर के राजा सुनंद के दर्शन किया। सुनंद युवक, पराक्रमी व ज्ञानी था। उसके और अवंती राजा के बीच

तक हठात् कलेजे की धड़कन बंद हो जाने से मर गया। तब राजा सुनन्द ने प्रचण्ड से कहा–"प्रचण्ड, तुम्हारी अमानवीय शक्तियों पर मेरा विश्वास जम गया है। लेकिन तुम्हारी इन शक्तियों से मेरा अथवा मेरे राज्य का क्या लाभ होगा?"

"मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि आप मेरी शक्ति का उपयोग आपके राज्य के विस्तार और आपने दुश्मन के विनाश के लिए करें। आपका दुश्मन अवंती का राजा आज से चौबीस दिनों में मरनेवाला है। अगर आप उस दिन अपनी सेना ले जाकर अवंती नगर को घेर लेंगे तो राजा की मौत के दुख में निमग्न उस नगर पर आप आसानी से क़ब्ज़ा कर सकते हैं।" प्रचण्ड ने सुनन्द को सलाह दी।

प्रचण्ड की सलाह के मुताबिक़ सुनन्द ने गुप्त रूप से अपनी सेना इकट्ठी की और अवंती के राजा की मौत के दिन अचानक उसने नगर पर हमला किया। लड़ाई के शुरू होने के थोड़ी देर बाद ही यह खबर आग की तरह फैल गयी कि क़िले में राजा की मौत हो गयी है। यह खबर सुनते ही अवंती के सिपाही हिम्मत हारकर सुनन्द के क़ैदी हो गये।

गहरी दुश्मनी थी। प्रचण्ड ने उसे अपनी अमानवीय शक्ति का परिचय दिया। सुनंद ने तुरंत उसकी बातों पर पूर्ण विश्वास भी न किया और न अविश्वास ही किया। परंतु उसने पूछा–"इस दरबार के लोगों में से कौन पहले मृत्यु के मुँह में जायगा?" इस पर प्रचण्ड ने दरबार में चारों तरफ़ दृष्टि दौड़ाकर गुप्त रूप से राजा को एक सिपाही की ओर इशारा करके बताया कि वह दो दिन के अन्दर मरनेवाला है। अभी उस पर प्रेत की छाया साफ़ दिखाई देती है। प्रचण्ड के कहे मुताबिक़ वह सिपाही दूसरे दिन शाम

सुनन्द ने अवंती के राज्य को मणिपुर के राज्य में मिला लिया। इसके एक-दो महीने बाद सुनन्द ने प्रचण्ड को अपने गुप्त कक्ष में बुला भेजा और आदेश दिया कि वह खज़ाने से जितना धन चाहे, लेकर राज्य को छोड़ चला जावे।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा— "राजन्, सुनन्द ने प्रचण्ड को अपना राज्य छोड़कर चले जाने का आदेश क्यों दिया? जब कि उसने सुनंद की भलाई की थी! क्या इसलिए कि जब उसकी मृत्यु का समय निकट आयगा, तब वह यह समाचार उसके दुश्मन को देकर उसे उकसायगा? अथवा क्षुद्र देवताओं की पूजा करनेवाला अगर उसके राज्य में रहता है, तो उसे हानिकारक समझकर यह आदेश दिया! इस प्रश्न का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सर टुकड़े-टुकड़े हो जायगा।"

इस पर विक्रमादित्य ने उत्तर दिया— "प्रचण्ड को राज्य से निकल जाने का आदेश इन दोनों कारणों से नहीं दिया गया। अवंती राज्य को जीतने के लिए प्रचण्ड ने जो मदद दी, उससे उसकी ज़रूरत की पूर्ति हो गयी! इससे अधिक मदद वह कुछ न कर सकेगा। उल्टे उसे और कुछ काल तक दरबार में रखने से उसकी हानि इस प्रकार होगी कि वह जिस-जिसकी मौत निकट आयेगी, उसे पहले ही यह खबर देकर अनावश्यक दुख पैदा करेगा। यह सब सोचकर ही प्रचण्ड ने उसकी जो मदद की थी, उसे उचित पुरस्कार देने के ख्याल से यह सलाह दी कि वह खज़ाने से जितना चाहे, उतना धन लेकर चले जावे।"

राजा के इस प्रकार मौन-भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

राजा की समस्या

प्राचीन काल में विदर्भ राज्य पर रघुराम नामक राजा शासन करता था। अकसर उसके मन में तरह-तरह की विचित्र समस्याएँ पैदा होती थीं। दरबार में अचानक उसे कोई विचित्र समस्या सूझती तो सभी दरबारियों के सामने उसका समाधान माँग बैठता। उसकी समस्या का जो लोग समाधान करते अथवा उसका कोई जवाब नहीं दे पाते उन सबको वह किसी न किसी प्रकार की सज़ा दे देता।

एक दिन राजा ने सभा के सामने एक विचित्र समस्या प्रकट की। वह समस्या यह थी कि दुनिया-भर में कहीं क्या ऐसी चोरी होती है जिससे कोई नुक़सान न हुआ हो और ऐसा धोखा हुआ है जिससे किसी को दुख न पहुँचा हो। चोरी के होने पर किसी को नुक़सान हुए बिना कैसे संभव है? धोखा देने पर धोखा खाये हुए व्यक्ति दुखी हुए बिना कैसे रह सकता है? इसलिए सभी दरबारियों ने मन में यही सोचा कि राजा का प्रश्न निरर्थक है। लेकिन किसीने यह बात प्रकट न की।

किसी को जवाब न देते देख राजा ने मंत्री को आदेश दिया—"मेरा विश्वास है कि ऐसी चोरियाँ व धोखे कहीं न कहीं ज़रूर होते होंगे। वे कहाँ पर हुए, इसका पता लगा कर मुझे दस दिनों के अन्दर सूचित करना पड़ेगा।"

सबने सोचा कि मंत्री की मौत इस बार निश्चित है। मंत्री ने दूसरे दिन से दरबार में आना बंद किया और नौकरों के ज़रिये दरबार में होनेवाली सारी बातों का वह रोज पता लगाता रहा।

इस घटना के ठीक दो-तीन दिन बाद राजा की प्रिय छितकबरी गाय बीमार का शिकार हो गयी। उसका इलाज कराया

जयगोविन्द

गया, लेकिन उसकी बीमारी दूर न हुई। सबने सोचा कि वह गाय ज़रूर मर जायगी। लेकिन वह मरी नहीं, बल्कि धीरे धीरे चंगा हो गयी और सात-आठ दिन के अन्दर वह पहले की तरह दूध भी देने लगी।

मंत्री ने अपनी अवधि के भीतर राजा की समस्या का जवाब मन में सोच लिया और दसवें दिन दरबार में हाज़िर हुआ। मंत्री को देखते ही राजा ने पूछा—"क्या तुमने इस बात का पता लगाया कि नुक़सान न पहुँचानेवाली चोरी और दुख न देनेवाले धोखे कैसे होते हैं?"

"सरकार, उसी का जवाब देने सेवा में हाजिर हुआ हूँ। किसी को नुक़सान न पहुँचानेवाली चोरी मैंने ही की। अगर आप मुझे अभय प्रदान करेंगे तो मैं निवेदन करूँगा।" मंत्री ने कहा।

"अच्छा, कहो तो।" राजा ने कहा।

मंत्री ने यों बताया—"महाराज, मैं आपकी समस्या का समाधान ढूंढते वेश बदल कर सारा राज्य घूम आया। घूमते-घूमते मैं एक दिन महोबा नामक गाँव में पहुँचा। वहाँ के एक किसान के घर के आंगन में मरने की हालत में पड़ी एक छितकबरी गाय दिखाई दी। वह किसान अपने नौकरों से कह रहा था—"यह गाय किसी तरह न बचेगी। मरने तक इसे खिलाने, इसका इलाज कराने और मरने पर इसके क्रिया-कर्म के मद्दे काफ़ी खर्च होगा। यह झंझट कौन मोल ले।" ये बातें सुनते ही मैंने उस रात को उस गाँव में ही रहने का निश्चय किया और रात के वक़्त उसे चुराकर एक गाड़ी पर लदवाये हमारे नगर में ले आया। वैद्यों ने बताया कि मैं जो गाय लाया था, वह दमे की बीमारी से परेशान है। यदि उसका इलाज कराया जाय तो चंगी हो जायगी। उसी वक़्त मैंने सुना कि आपकी छितकबरी

गाय मरने की हालत में है। तुरंत मैंने चोरी की हुई गाय को आपकी गाय की जगह रखवा दी और आपकी गाय को श्मशान में पहुँचवा दी। उसने रास्ते में प्राण छोड़े। मैं जो गाय लाया था, उसका इलाज़ कर वैद्यों ने उसे बचाया। मैंने सुना कि वह गाय अब चंगी है और पहले से भी ज्यादा दूध देती है। इस पर ख़ुश हो आपने वैद्यों को इनाम भी दिये हैं। महोबे का किसान भी गाय से पिंड छूटने और ख़र्च के बच जाने पर बहुत ख़ुश हुआ। देखते हैं न, मैंने दो चोरियाँ करके दोनों को ख़ुश किया। किसी को भी नुक़सान नहीं पहुँचाया। उल्टे एक गाय की जान बचाकर मैंने पुण्य भी कमाया है।"

दरबारियों ने मंत्री की बातों पर ख़ुशी प्रकट की और कहा—"वाह, वाह! बढ़िया जवाब है। राजा का संदेह दूर हो गया।"

राजा ने भी प्रसन्न होकर पूछा—"क्या तुमने दुख न देनेवाला धोखा भी दिया?"

"हाँ, हाँ, सरकार। वह भी मैंने ही किया है।" मंत्री ने जवाब दिया।

"तुमने ही धोखा दिया? किस को! कैसे किया? उनको दुख क्यों नही पहुँचा!" राजा ने एक साँस में कई सवाल पूछे।

"मैंने आपको ही धोखा दिया है। महाराज! मैंने अब तक जो कुछ कहा, सब झूठ है। मैं महोवा में बिलकुल नहीं गया। किसान की गाय का बीमार होना, उसकी चोरी करना, ये सारी बातें झूठ हैं। फिर भी आपने मेरी झूठी बातों पर यक़ीन कर धोखा खाया। लेकिन इससे आपका कोई नुक़सान नहीं हुआ।" मंत्री ने समझाया।

राजा ने अपने मंत्री की अक़्लमंदी पर ख़ुश होकर उसे ख़ूब इनाम दिये और उसका सम्मान किया।

विश्वासघात

प्राचीनकाल में मगध पर राजसिंह नामक राजा राज्य करता था। उन दिनों में कल्याणपुर नामक छोटी-सी रियासत पर विक्रमसिंह शासन करता था। कल्याणपुर की रियासत स्वतंत्र थी। राजसिंह चाहता तो कल्याणपुर पर बड़ी आसानी से अधिकार कर सकता था। लेकिन उसने ऐसा नहीं किया, बल्कि विक्रमसिंह के साथ मैत्री स्थापित कर उसे बड़े स्नेह भाव से देखा करता था। इसकी वजह यह थी कि विक्रमसिंह वैसे छोटा राजा था, पर बड़ा बुद्धिमान और ईमानदार था। वह प्रजा को तक़लीफ़ न देता था और प्रजा भी उसे बहुत चाहती थी।

कल्याणपुर के पड़ोस में कांचनपुर नामक राज्य था जो मगध साम्राज्य के अधीन था। कल्याणपुर का राजा चण्डवर्मा राजसिंह का सामंत था। वह राजसिंह के हाथों में हारकर अपनी स्वतंत्रता खो बैठा था। वह बड़ा ही दुर्बल और दुष्ट था। वह विक्रमसिंह से मन ही मन जला करता था। एक समय दोनों की हालत समान थी, पर अब वह सामंत था और विक्रमसिंह स्वतंत्र था। अलावा इसके विक्रमसिंह ने राजसिंह की मित्रता भी प्राप्त की थी। यही उसकी ईर्ष्या का कारण था।

यह बात चण्डवर्मा को बराबर खटकती थी। राजसिंह चाहता तो मिनटों में विक्रमसिंह को हरा सकता था। अगर उन दोनों राज्यों के बीच लड़ाई छिड़ जाय तो विक्रमसिंह हार जायगा और कल्याणपुर पर शासन करने का भार राजसिंह उसे सौंप सकता है। लेकिन ऐसी हालत न थी। विक्रमसिंह चण्डवर्मा की बग़ल में छुरी बनकर रह रहा है।

"महाराज, विक्रमसिंह देखने में सज्जन भले ही दीखते हो, पर वह दुष्ट है। मैं

हरिराम

उसके पड़ोस में हूँ, इसलिए उसके बारे में बहुत कुछ जानता हूँ। उसे ज़रा भी मौक़ा मिला तो वह चूकेगा नहीं, हम पर हमला कर बैठेगा।" चण्डवर्मा ने एक दिन मौक़ा पाकर राजसिंह को उकसाया। पर राजसिंह हँसकर रह गया।

दिन गुजरते गये। चण्डवर्मा विक्रमसिंह का सर्वनाश करने की बात सोचता रहा। आख़िर उसे एक मौक़ा मिल ही गया।

हर साल विजयादशमी के दिनों में राजसिंह उत्सव मनाया करता था। उस मौक़े पर वह सभी सामंत राजाओं को निमंत्रण भेजा करता था। विक्रमसिंह के पास ही यह निमंत्रण नियमित रूप से जाया करता था। इस वर्ष वह निमंत्रण पत्र शक्तिसिंह नामक एक योद्धा लेकर कल्याणपुर के लिए रवाना हुआ। शक्तिसिंह बड़ा वीर था। उसने कई युद्धों में महाराजा के साथ रहकर विजय प्राप्त करायी थी। बाक़ी समयों में वह महाराजा का प्रधान अंगरक्षक था।

शक्तिसिंह निमंत्रण पत्र लेकर कल्याणपुर जाते रास्ते में एक दिन कांचनपुर में चण्डवर्मा का अतिथि बनकर ठहर गया। चण्डवर्मा ने सोचा कि धोखाधड़ी से विक्रमसिंह के ज़रिये शक्तिसिंह का वध कराऊँ तो महाराजा राजसिंह विक्रम का वध करके ही साँस लेगा। विक्रमसिंह के मरने पर उसका राज्य राजसिंह के साम्राज्य में मिल जावेगा और पड़ोस में स्थित मेरे अधीन में वह राज्य आ जायेगा।

उस रात को जब शक्तिसिंह सो रहा था, तब उसकी जेब में से विक्रम के नाम जो निमंत्रण-पत्र था, उसे चण्डवर्मा ने निकाला और उसकी जगह दूसरा पत्र रखा। दूसरे दिन प्रात:काल वह पत्र लेकर शक्तिसिंह कल्याणपुर चला गया।

विजयादशमी के उत्सव समाप्त हुए। लेकिन उसमें भाग लेने विक्रमसिंह नहीं आया। उसके पास निमंत्रण-पत्र ले जानेवाला शक्तिसिंह भी लौटकर न आया। उसका क्या हुआ, यह भी किसी को पता नं चला।

"शक्तिसिंह पर कुछ बीता हो तो उसका पता विक्रमसिंह को ही लग गया होगा। बाक़ी लोगों को कैसे मालूम होगा!" चण्डवर्मा ने महाराजा से कहा।

महाराजा ने आश्चर्य में आकर पूछा– "क्या तुम्हारा उद्देश्य है कि शक्तिसिंह के साथ विक्रमसिंह ने कोई दगा किया?"

"महाराज! मुझे पहले से ही संदेह था कि विक्रमसिंह कोई कपट नाटक खेल रहा है। उस नाटक का यह पहला दृश्य है। और न मालूम वह क्या क्या करना चाहता है, मेरी समझ में नहीं आ रहा है।" चण्डवर्मा ने कहा।

महाराजा राजसिंह के मन में कोई शंका पैदा हो गयी। उस शंका का निवारण करने के लिए उसने विक्रम के पास एक दूत भेजा। दूत ने लौटकर कहा–"महाराज, आपने जो जो सवाल पूछने को कहा, वे सभी सवाल मैंने पूछे, परंतु राजा विक्रम ने किसी भी सवाल का ठीक से मुझे जवाब नहीं दिया।"
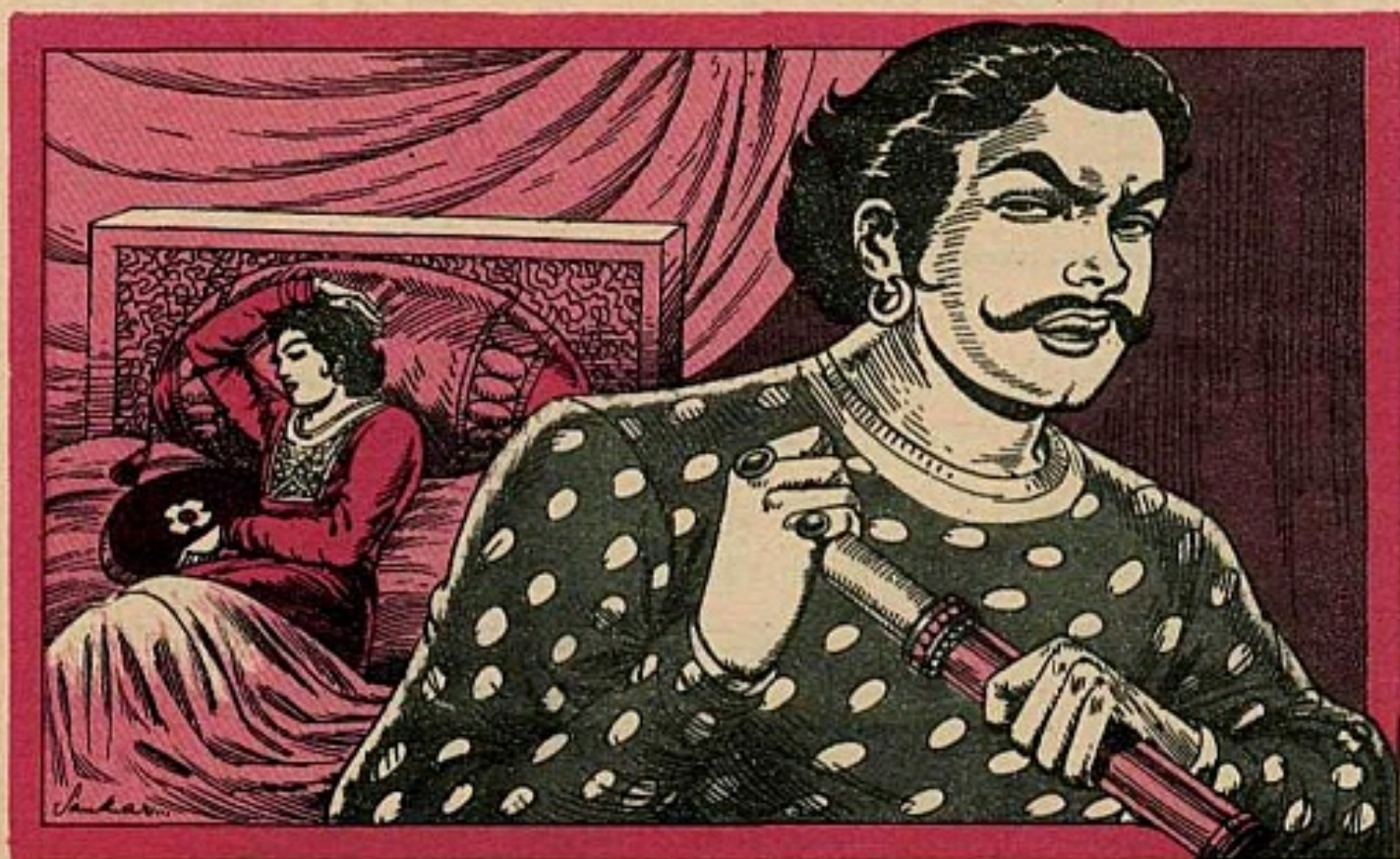
महाराजा ने एक और कुशल दूत को विक्रम के पास भेजा, लेकिन इस बार भी कोई फल न निकला। इससे महाराजा की शंकाएँ दूर न हुईं, बल्कि और दृढ़ हो गयीं। लेकिन एक बात साबित हुई कि महाराजा का विश्वासपात्र साथी शक्तिसिंह जीवित नहीं रहा।

"विक्रमसिंह ने मेरे साथ दगा किया है। तुरंत उसके राज्य पर हमला करके उसका सर्वनाश करूँगा।" महाराजा ने क़सम खायी। अपनी चाल के चलते देख चण्डवर्मा मारे खुशी के उछल पड़ा।

मगध की सेनाओं ने कल्याणपुर पहुँचकर घेरा डाला। महाराजा के शिबिर में चण्डवर्मा सलाहकार बनकर उसे सलाहें दे रहा था। दोनों महाराजा के शिबिर में बैठकर जब परामर्श कर रहे थे तब एक मामूली सैनिक के वेश में एक व्यक्ति विक्रमसिंह का दूत बनकर आ पहुँचा।

"तुम्हारे राजा ने मेरे पास कौन-सा संदेश भेजा है?" महाराजा राजसिंह ने दूत से पूछा।

"आप अचानक और अकारण ही हम पर आक्रमण कर बैठे हैं। हम युद्ध के लिए तैयार नहीं हैं। हमें थोड़ा और समय चाहिए।" राजदूत ने महाराजा राजसिंह से निवेदन किया।

"हम तुम लोगों के सामने अपनी शक्ति का परिचय देने नहीं आये हैं। तुम्हारे राजा ने मेरे साथ जो द्रोह किया है, उस अपराध के लिए उसे दण्ड देने आये हैं। युद्ध के लिए अगर तुम लोग तैयार न हों तो इसका फल भोग लो।" महाराजा ने कठोर स्वर में जवाब दिया।

चण्डवर्मा ने महाराजा राजसिंह से कहा—"सम्राट, इन लोगों ने हमारे दूत का

वध किया है। हम इस दूत का वध करके उसका बदला लेंगे।"

"तुम जल्दबाज़ी न करो, चण्ड!" यह कहते चण्डवर्मा को महाराजा ने रोका और दूत से पूछा—"तुम लोगों ने शक्तिसिंह का वध क्यों किया? उसने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है?"

दूत ने कोई समाधान नहीं दिया, बल्कि वह मौन रहा।

महाराज क्रोध से काँप उठा और गरजकर बोला—"बोलते क्यों नहीं? तुम्हारा राजा अगर मुझ से ईर्ष्या करता है तो बदले में एक निरपराधी की हत्या करता है? मित्रता का बहाना करते इस तरह पीठ में छुरी भोंकता है?"

इस पर राजदूत ने उत्तेजित होकर कहा—"सम्राट, मेरे राजा ने जान बूझकर आपके दूत की हत्या नहीं की।"

झट चण्डवर्मा बोल उठा—"जान-बूझकर हत्या नहीं की? तो क्या महाराजा के वध करने का आदेश देने से हत्या की? शायद उन्होंने निमंत्रण-पत्र में उसका वध करने का आदेश दिया है क्या? क्यों, बोलो तो?" चण्डवर्मा अट्टहास कर उठा।

"आपने सही बात कही। लीजिये, आपके महाराजा ने जो निमंत्रण-पत्र

भेजा है!" यह कहते राजदूत ने एक निमंत्रण-पत्र राजसिंह के हाथ दिया। उसे देख राजसिंह चकित हो गया। उसमें यों लिखा था :—

"इस पत्र को लानेवाला शक्तिसिंह राजद्रोही है। गुप्त रूप से इसका वध करो—राजसिंह!"

"क्या लिखा है?" यह कहते चण्डवर्मा ने महाराजा के हाथ से वह पत्र लेकर पढ़ा। वह पत्र उसके द्वारा कल्पित पत्र था। चण्डवर्मा ने सपने में भी नहीं सोचा था कि वह पत्र पुनः महाराजा राजसिंह के हाथ में पड़ेगा। उसका चेहरा सफ़ेद पड़ गया।

उसके चेहरे को तीक्ष्ण दृष्टि से देखनेवाले महाराजा ने चण्डवर्मा को डाँटते हुए पूछा–"सच बताओ! अगर तुमने यह जाली प्रत्र तैयार नहीं किया तो तुमको इस पत्र का समाचार कैसे मालूम हुआ?"

"महाराज, मेरा भी यही संदेह है।" ये शब्द कहते राजदूत ने सर पर से पगड़ी उतारी।

"अरे, तुम हो भाई।" महाराजा ने बिक्रमसिंह को पहचान कर कहा।

चण्डवर्मा का कपट प्रकट हो गया। राजभटों ने उसे बंदी बनाया।

"विक्रमसिंह! तुमने इस दुष्ट का समाचार मुझे उसी समय क्यों नहीं दिया? आज तक चुप क्यों रहे?" महाराजा राजसिंह ने पूछा।

"मैं इसलिए ठहर गया कि इस दुष्ट ने जो जाली पत्र तैयार किया है, उसका सबूत भी मिल जाय तो अच्छा हो और न मालूम वह और कितने कुतंत्र करेगा, यह भी देखना चाहता था, सम्राट! आपको मुझ पर हमला करने उकसाया। हमारी दोस्ती में आग लगाने की कोशिश की। मैं इसकी आदत से पहले से ही परिचित हूँ। आपकी उदारता भी जानता हूँ। इसीलिए मैंने शक्तिसिंह को आज तक अपने ही पास सुरक्षित रखा। जैसे मैंने सोचा था, वैसे ही चण्डवर्मा ने जो गड्ढा खोदा, उसमें वह खुद गिर गया।" विक्रमसिंह ने समझाया।

चण्डवर्मा का उसी समय इन्साफ़ किया गया। उसे मौत की सजा दी गयी। शक्तिसिंह को कांचनपुर का अधिपति नियुक्त किया गया। इसके बाद राजसिंह कुछ समय तक विक्रम का अतिथि बनकर रहा, फिर अपनी सेनाओं के साथ राजधानी को लौट आया।

विचित्र वसीयतनामा

एक गाँव में धर्मनंद नामक एक ज़मीन्दार था। उसके एक बहुत बड़ा महल, सैकड़ों मवेशियाँ, असंख्य गहने और सैकड़ों एकड़ ज़मीन थी। नौकर-चाकर और सेवकों की कमी न थी।

धर्मनंद के तीन बेटे थे। बड़ा लड़का श्रीधर देखने में सुन्दर था, लेकिन विलासी था। दूसरा लड़का विजय मितव्ययी था और खेत का काम तथा अन्य मामलों में बड़ी अभिरुचि रखनेवाला था। तीसरा लड़का महेश ऐयाशी और फ़िज़ूलख़र्ची था।

मौत का समय निकट आया जानकर धर्मनंद ने वसीयतनामा लिखा और उसे अमल करने की जिम्मेदारी अपने दीवान को सौंपकर मर गया। उसके मरने के बाद दीवान ने धर्मनंद के तीनों लड़कों को बुलाकर वसीयतनामा पढ़कर सुनाया। उसकी शर्तें यों थीं :-

उसकी ज़मीन-जायदाद तीनों बेटों में बांटनी है।

जो हिस्सा प्रत्येक के हक़ में आवेगा, उस पर तीनों अपना अधिकार न करे और न उसका अनुभव करे।

प्रत्येक लड़का अपने हिस्से की जायदाद पर अधिकार नहीं करता है, इसलिए बदले में हर एक लड़के को दो हज़ार रुपयों के हिसाब से अपनी माँ को चुकाना होगा।

ये शर्तें सुनकर धर्मनंद के तीनों लड़के चकित हो गये। उनका अर्थ किसी की समझ में न आया। इस पर तीसरे लड़के महेश ने दीवान से कहा—"यह वसीयतनामा कोई माने नहीं रखता। मुझे लगता है कि इसे लिखाते समय मेरे पिता का मस्तिष्क ठीक न रहा होगा। इसलिए आप अपनी इच्छा के अनुसार यह जायदाद हम तीनों में बांट दीजिये।"

अरविंद

"आपके पिताजी ने यह वसीयतनामा स्वयं लिखा है। उसका पालन करना ज़रूरी है। इसके माने ज़रूर है। उन शर्तों का पालन करते जायदाद बांट देना मेरा कर्तव्य है। पंचों को बुलाकर उनके सामने ही मैं आपकी जायदाद बांट कर देता हूँ। अगर वे स्वीकार करेंगे कि वसीयतनामा की शर्तों का पूरा पालन हुआ है, तभी मैं समझूंगा कि मैंने अपना कर्तव्य ठीक से अदा किया है।" दीवान ने तीनों लड़कों को समझाया।

इसके बाद दीवान ने गाँव के पंचों को बुला भेजा। उनके सामने वसीयतनामा पढ़कर सुनाया और उसने उन लोगों से यह भी बताया कि वह कैसे जायदाद बांटने जा रहा है।

"मैं खेत, मवेशी, नौकर और अन्य खेती संबंधी औज़ार बड़े लड़के श्रीधर को देता हूँ। महल और बगीचा दूसरे लड़के विजय को देता हूँ। कपड़े, गहने, अलंकार संबंधी समान और सेवकों को तीसरे लड़के महेश को सौंपता हूँ।" दीवान ने कहा।

इस प्रकार बांटने से धर्मनंद के तीनों लड़कों को उनके लिए अनुपयोगी चीजें प्राप्त हुईं। इसलिए उन्हें अपने अपने हिस्से को बदलना आवश्यक हो गया। महेश का हिस्सा श्रीधर को, श्रीधर का हिस्सा विजय को और विजय का हिस्सा महेश को बदल दिया गया। इस तरह से ज़मीन्दार ने जो शर्तें रखीं, उनकी पूर्ति हो जायगी। यह बात जब तीनों लड़कों की समझ में आयी, तब वे दीवान की अक्लमंदी पर खुश हुए, उन तीनों ने अपनी माँ को दो दो हज़ार के हिसाब से रुपये दिये। उन छे हज़ार रुपयों से धर्मनंद की पत्नी की ज़िंदगी मज़े में कट गयी। लड़के भी अपनी माँ का ख्याल करते रहें।

योग्यता की जाँच

एक गाँव में श्यामलाल नामक एक किसान था। उसकी इकलौती बेटी का नाम लक्ष्मी था। जब वह शादी के योग्य हुई तब आस-पास के गाँवों से किसान आकर श्यामलाल से अपने लड़कों के साथ उसकी बेटी की शादी करने का प्रस्ताव रखने लगे।

श्यामलाल के घर जो भी किसान शादी का प्रस्ताव लेकर आता, उसका आदर-सत्कार करता और कहता—"तुम जानते हो कि मेरे एक ही लड़की है। मैं चाहता हूँ कि मेरे होने वाला दामाद अक्लमंद और मेहनती हो। यूँ ही घर बैठे खाते रहे तो मेरी जमीन-जायदाद थोड़े ही दिनों में कपूर की भांति हर जायगी। इसलिए तुम लोग अपने पुत्रों को मेरे यहाँ भेज दो। उनकी मैं छोटी सी परीक्षा लूँगा, उसमें जो सफल निकलेगा, उसके साथ मैं अपनी बेटी की शादी करूँगा।"

कुछ दिन बीत गये। पड़ोसी गाँवों से तीन युवक अपने पिताओं की अनुमति लेकर श्यामलाल के घर पहुँचे। वे तीनों युवक लगभग एक ही उम्र के थे। देखने में अक़्लमंद और सज्जन लगते थे।

श्यामलाल ने उन युवकों से कहा— "तुम तीनों अपने साथ एक कौड़ी भी ले जाये बिना कहीं चले जाओ और एक महीने के अन्दर सौ रुपये कमा लाओ। इसके बाद मैं ख़ुद निर्णय कर लूँगा कि किसके साथ मेरी लड़की को ब्याहना है।"

तीनों युवक श्यामलाल की शर्त को स्वीकार कर तीन दिशाओं में रवाना हुए। उनमें कोदण्डराम नामक युवक पूरब की ओर रवाना हुआ। जब वह एक जंगल से होकर गुजर रहा था तब उसे रास्ते में

शंकरलाल

में अपने गुरुदेव का आदेश पाकर इसे तालाब के किनारे प्रतिष्ठित करने के लिए यहाँ आया हुआ हूँ। भक्ति और निष्ठा के साथ इस मूर्ति की पूजा करने से समय पर वर्षा होगी और इस प्रदेश में कभी अकाल न आयेगा।"

कोदण्डराम की बातों पर उस गाँव के लोगों का विश्वास जम गया। वे केले व नारियल लाकर देवी पर नैवेद्य चढ़ाने लगे। कुछ भक्तों ने एक छोटी सी हुंडी लाकर रख दी और उस में अपनी भेंट की रक़म डालने लगे। कुछ लोग एक दीपक और तेल दे गये।

एक लकड़ी का खिलौना मिला। वह किसी देवी मूर्ति का खिलौना था। उसे देखते ही कोदण्डराम को एक उपाय सूझा। तुरंत उसने साधु का वेश बनाया, एक गाँव में पहुँचकर हल्दी और कुंकम लिया। लकड़ी के खिलौने को पोत कर एक तालाब के किनारे पीपल के पेड़ के नीचे जा बैठा।

तालाब में पानी भरने आने वालों की भीड़ कोदण्डराम को घेरने लगी। वह उन लोगों को समझाने लगा—"यह मूर्ति काशी के पास गंगाजी में मेरे गुरुदेव को प्राप्त हुई है। यह गंगा माई की मूर्ति है।

एक सप्ताह पूरा भी न हो पाया कि कोदण्डराम का खिलौना गंगामाई की मूर्ति के रूप में प्रसिद्ध हो गया। भक्त अपनी भेंटों से हुंडी को भरने लगे। यह हालत देख कोदण्डराम ने भक्तों को समझाया कि वह जल्द गंगामाई के लिए एक मंदिर बनवायेगा। वह प्रति दिन रात के समय हुंडी की रक़म गिनता और उसे अलग एक जगह छिपाने लगा। पंद्रह दिनों में उस के लिए आवश्यक सौ रुपये जमा हो गये। इस बीच में गाँव के दो-तीन युवक उसके शिष्य बन गये।

कोदण्डराम कुछ दिन और वहाँ पर रहा। भक्तों से जो भेंट की रक़म मिलती, उसे अपने शिष्यों के हाथ सौंपता गया। महीना पूरा होने में अब केवल चार-पाँच दिन रह गये। तब उसने अपने शिष्यों को समझाया कि उसे अपने गुरुदेव ने बुला भेजा है। इसलिए वह जा रहा है। गंगामाई के लिए मंदिर बनाने की जिम्मेदारी अपने शिष्यों को सौंपकर वह चलता बना।

दूसरा युवक आनन्द श्यामलाल के यहाँ से पश्चिम की ओर रवाना हुआ। महीने के अन्दर सौ रुपये कमाने की बात दूर रही, बल्कि हर जून अपना पेट भरना भी उस के लिए मुश्किल हो गया। भीख मांगना उसे बड़ा अपमान सा लगा। चोरी करने की आदत और हिम्मत भी उसमें नहीं थी। इसलिए आनंद किसी गाँव से होकर गुजरता तो उस गाँव के छोटे बच्चों के हाथों से खाने की चीज़ें छीन लेता, पैसे हड़पता और अपना पेट भर लेता था।

आनंद इस हालत से ऊब उठा और उस ने घर लौटने का निश्चय किया। एक दिन की रात को वह एक नहर के किनारे से जा रहा था तब पीछे से कोई

दौड़ता आया और उस पर एक छोटी सी गठरी फेंककर दौड़ने लगा। उसी वक़्त उसे पीछे से "चोर, चोर है, पकड़ो" पुकार सुनायी दीं। आनंद को हालत समझते देर न लगी। उसने दौड़नेवाले आदमी का पीछा कर उसे पकड़ लिया।

इतने में चोर का पीछा करनेवाले लोग वहाँ आ पहुँचे। आनंद ने जिस आदमी को पकड़ा था, वह लुटेरा था। वह उस रात को ज़मीन्दार के घर से गहने चुरा कर भाग रहा था। कुत्ते के भूँकने से ज़मीन्दार के नौकर जाग उठे और उसका पीछा करने लगे। वह चोर आनन्द के

हाथों में फँस गया। चोरी गये माल के मिलने के साथ आनन्द ने बड़ी हिम्मत से चोर को पकड़ लिया था। इस पर खुश हो ज़मीन्दार ने आनंद को सौ रुपये का इनाम दिया। सौ रुपये लेकर आनंद बड़ी खुशी से वापस लौटा।

तीसरा युवक गुरुनाथ था। वह श्यामलाल के घर से उत्तर की ओर रवाना हुआ। दुपहर तक एक गाँव के किसान के घर पहुँचा और पूछा–"महाशय, मुझे बड़ी भूख लगी है। खाना खिलाओ। मैं खेत और बगीचे का काम करूँगा।"

उस घर के मालिक ने गुरुनाथ को खाना खिलाया और शाम को अपने साथ उसे खेत पर ले गया। गुरुनाथ ने दिल लगा कर बड़ी मेहनत की। उस रात को ही उसे उस घर में खाना दिया गया। दूसरे दिन सबेरे वह उठ कर दूसरे गाँव में गया। वहाँ पर भी एक किसान के खेत में काम कर खाना पाया। इस तरह एक हफ़्ता बीत गया। लेकिन गुरुनाथ एक कौड़ी भी कमा नहीं पाया। खाने-पीने की कोई तक़लीफ़ न थी।

गुरुनाथ सोचने लगा–यही हाल रहा तो वह एक महीना पूरा होने के पहले

सौ रुपये कैसे कमा सकता है? यही सोचते वह एक गांव से हो कर गुजरने लगा। उसने देखा कि एक पेड़ के नीचे चार-पांच आदमी किसी बात को लेकर झगड़ा कर रहे थे। गुरुनाथ ने उन के निकट पहुँचकर कारण जान लिया। झगड़ा करनेवालों में एक रसोइयों का नेता था और उसकी मदद के लिए रसोइयों को लाने का वचन देनेवाला भी था। जिसने वचन दिया था, वह तीन रसोइयों से ज़्यादा लोगों को इकट्ठा न कर पाया था। और दो रसोइयों को लाने के लिए रसोइयों का नेता झगड़ा कर रहा था।

गुरुनाथ ने रसोइयों के नेता को समझाया कि वह रसोई बनाना तो नहीं जानता है, लेकिन आटा गूँथने, पानी भरने, बर्तन माँझने वगैरह के काम में वह मदद दे सकता है, इसलिए उसे भी वह काम दे। और रसोइयों के मिलने की संभावना न थी। रसोइयों के नेता ने एक ज़मीन्दार के घर दावत के लिए आवश्यक रसोई बनाने का वादा किया था। इसलिए उसने सोचा कि गुरुनाथ छोटे-मोटे कामों में भी मदद दे सकता है, यही सोच कर वह उसे भी साथ ले गया।

वह शादियों का मौसम था। इसलिए रसोइयों का नेता गुरुनाथ को अपने साथ कई गाँवों में ले गया और उसकी मेहनत के अनुसार मज़दूरी भी दिलवाया। गुरुनाथ इस तरह महीना पूरा होने के पहले सौ रुपये कमा कर श्यामलाल के गाँव की ओर रवाना हुआ।

अवधि के पहले तीनों युवकों को सौ सौ रुपयों के साथ वापस लौटे देख श्यामलाल बहुत खुश हुआ। पहले उसने कोदण्डराम से पूछा कि उसने सौ रुपये कैसे कमाये।

"मैं ने बड़ी चालाकी से लोगों के अंध विश्वासों से फ़ायदा उठाकर एक कपट नाटक रचा और सौ रुपये कमाये।" ये कहते कोदण्डराम ने लकड़ी के खिलौने की सारी कहानी श्यामलाल को सुनायी।

"तुमने कैसे सौ रुपये कमाये?" श्यामलाल ने आनंद से पूछा।

"मैं शायद क़िस्मतवर हूँ।" आनंद ने चोर को पकड़ने व ज़मीन्दार के द्वारा सौ रुपये इनाम पाने की कहानी सुनायी।

"तुमने कैसे कमाये, गुरुनाथ?" श्यामलाल ने गुरुनाथ से पूछा।

"मैं ने रुपये कमाने के लिए न चालाकी की और न मेहनत किये बिना क़िस्मत से रुपये पाये। बड़ी मेहनत कर के ही ये सौ रुपये कमाये।" गुरुनाथ ने रसोइयों के नेता की मदद करने और सौ रुपये मज़दूरी प्राप्त करने की कहानी श्यामलाल को बतायी।

कोदण्डराम अक़्लमंद ज़रूर है, लेकिन उस ने कृत्रिम मार्ग का प्रयोग किया। आनंद केवल क़िस्मत के आसरे पर बैठने वाला व्यक्ति है। परंतु गुरुनाथ कड़ी मेहनत कर के मेहनताना पाने की आदत रखनेवाला है। ये सारी बातें सोच कर श्यामलाल ने गुरुनाथ के साथ अपनी लड़की की शादी की।

मिट्टी की समस्या

एक गाँव के लोगों ने एक कुआँ खुदवाने का फ़ैसला किया। कुआँ खोदने के लिए गाँव के मुखिये ने अनुमति दी और आवश्यक मजदूरों और पर्यवेक्षक का इंतज़ाम किया।

पर्यवेक्षक ने कुआँ खुदवाने का काम शुरू करते हुए गाँव के मुखिये के पास आकर पूछा–"सरकार, कुआँ खोदते समय जो मिट्टी निकलेगी, उसे कहाँ पर डलवा दूँ?"

मुखिये ने थोड़ी देर तक सोचा और कहा–"उस मिट्टी को डालने के लिए एक अलग गड्ढा खुदवायेंगे।"

"तब उस गड्ढे की मिट्टी को कहाँ पर डाले? यह भी तो एक समस्या है?" पर्यवेक्षक ने पूछा।

"हूँ, यह भी नहीं जानते हो? इस मिट्टी और उस मिट्टी के अटने लायक़ एक बड़ा गड्ढा और खुदवा लो।" गाँव का मुखिया खीझकर बोल पड़ा।

बुद्धू

गाँव की आखिरी गली के खपरैलवाले मकान में रहनेवाले लड़के को सब बच्चे बुद्धू कहकर मजाक़ उड़ा रहे थे। दादा ने लड़कों को डांट बतायी।

"अबे, बुद्धू भी राजकुमारियों के साथ शादी करके राज करते हैं। समझते हो?" दादा ने कहा।

बच्चों ने दादा से हठ किया कि राजकुमारी के साथ शादी करनेवाले एक बुद्धू की कहानी सुनावे। बच्चों को कहानी सुनने का शौक़ है तो दादा को कहानी सुनाने का शौक़ था। इसलिए दादा ने बुद्धू की कहानी शुरू की।

पुराने ज़माने में एक गरीब औरत थी। उसके एक लड़का था। उसके दिमाग में कुछ न था, याने बेवकूफ़ था। लेकिन उसका सर भी गंजा था। देखने में उसका सर मांझ कर औंधाये हुए कांसे के लोटे जैसा था।

"अरे, तुम किसी काम के नहीं हो? कैसे पेट भरोगे? तुम्हारे सर पर एक भी बाल नहीं है। कौन तुमको लड़की देगा?" माँ उससे कहती।

वह सचमुच बुद्धू था। इसलिए उसे इस बात की चिंता न थी।

एक दिन क्या हुआ, पालकी में बैठकर राजकुमारी कहीं जा रही थी। बुद्धू ने उसे देख लिया। बुद्धू ने मन में निश्चय किया कि शादी करनी है तो राजकुमारी के साथ ही करनी है। यह सोचकर उसने घर जाते ही अपनी माँ से कहा—"माँ, तुम तुरंत राजा के पास जाओ और मेरी ओर से कह दो कि मैं राजकुमारी के साथ शादी करना चाहता हूँ।"

माँ का चेहरा सफ़ेद पड़ गया। उसने आश्चर्य में आकर कहा—"अरे, मूर्ख! तुम पागल तो नहीं हुए हो? ये बातें राजा

सुनेंगे तो तुम्हारा और मेरा भी गला कटवा देंगे। आइंदा कभी ऐसी बातें अपने मुँह से न निकालो!"

लेकिन बुद्धू ने अपनी माँ की बातों की परवाह न की। उसे राजा के पास जाने को तंग करने लगा। आखिर तंग आकर बुद्धू की माँ एक दिन राजा के पास पहुँची।

दरबार लगा हुआ था। राजा सिंहासन पर बैठा था। बुद्धू की माँ ने वहाँ पहुँचकर विनती की—"महाराज, मेरा लड़का पागल है। वह रोज़ आप से यह कहने के लिए मुझे तंग करता है कि मैं यह कहूँ कि वह राजकुमारी के साथ शादी करना चाहता है।"

राजा भी अनोखा आदमी था। यह बात सुनकर वह नाराज़ नहीं हुआ। उसने मन में सोचा कि यह तो कोई विचित्र बात मालूम होती है। फिर उस औरत से बोला—"यह बात तुम्हारा लड़का ही आकर मुझ से खुद कह सकता है न? तुमको क्यों दूत बनाकर भेजा?"

माँ ने घर लौटकर दूसरे दिन अपने बुद्धू लड़के को ही राजा के पास भेजा। बुद्धू आकर राजा को नमस्कार करके हाथ बांधकर खड़ा हो गया।

"देखो, मैंने सुना कि तुम राजकुमारी से शादी करना चाहते हो! तब तो मेरी बात सुनो। राजोद्यान में गीत गानेवाले पक्षी नहीं हैं। जो आदमी ऐसे पक्षियों को लाकर हमारे बगीचे में ठहरायेगा, उसके साथ मैं अपनी लड़की का विवाह करना चाहता हूँ। तुम यह काम कर सकेंगे तो करो।" राजा ने समझाया।

बुद्धू ने कहा—"जी हुज़ूर! मैं कोशिश करूँगा।" यह कहकर वह वहाँ से निकल पड़ा। मगर बुद्धू यह बिलकुल नहीं जानता था कि ऐसे पक्षी कहाँ

रहते हैं और उन्हें बगीचे में कैसे ले आना है। इसलिए वह परेशान हो, इसी फ़िक्र में कई दिनों तक घूमता रहा।

एक दिन एक साधू से बुद्धू की भेंट हुई। उसने बुद्धू से पूछा—"बेटा, क्यों परेशान हो?"

बुद्धू ने आँखों में आँसू भरकर अपनी सारी कहानी कह सुनायी।

"तुम में सचमुच लगन है। दूसरा कोई होता तो यह बात भूलकर कोई दूसरा काम ढूंढ लेता। तुम सीधे एक कोस की दूरी तक चले जाओगे तो तुमको एक बहुत बड़ा बरगद का पेड़ दिखायी देगा। उस पर गानेवाले पक्षी दिखायी पड़ेंगे। तुम पेड़ के नीचे पहुँचकर "ऊँ, फट्!" बोलो। तब वे सभी पक्षी बिना उड़े वैसे ही बैठे रहेंगे। तुम उनको राजा के बगीचे में ले जाकर फिर "ऊँ! फट!" कहो! वे उड़ने लग जायेंगे। इसके बाद तुम राजकुमारी से शादी करके आराम से रहो।" बुद्धू को यह सलाह देकर साधू अपने रास्ते चला गया।

साधू के कहे अनुसार बुद्धू पक्षियोंवाले पेड़ के पास पहुँचा। उस पर रंग-बिरंगे पक्षी थे। छोटे-बड़े सब तरह के थे। सभी पक्षी गीत गा रहे थे।

बुद्धू ने उनको देख "ऊँ, फट!" कहा। तुरंत पक्षियों ने उड़ना व गाना बंद किया। बुद्धू ने उनको बड़ी आसानी से पकड़ लिया। उनको ले जाकर राजा के उद्यान में पेड़ों पर छोड़ दिया। 'ऊँ फट्!' कहते ही राजा का बगीचा पक्षियों के गानों से गूँज उठा।

इसके बाद बुद्धू राजा के पास पहुँचा और बोला—"महाराज, आप की आज्ञा के मुताबिक़ मैं ने उद्यान को गानेवाले पक्षियों से भर दिया है। अब राजकुमारी के साथ मेरी शादी कीजिये।"

"अरे, इस में कौन बड़ी बात है। ऐसा ही करेंगे। लगता है, तुम जादू की विद्याएँ जानते हो! तुम अपने गंजे सर पर बाल उगाकर आ जाओ, तुम्हारी शादी कर दी जायगी।"

"जी सरकार!" कहते बुद्धू ने झुककर राजा को प्रणाम किया। अपने सर पर बाल उगाने का उपाय सोचते घर लौटा।

बुद्धू के जाते ही राजा ने मंत्री को बुलाकर कहा—"महामंत्री, मैं तुम्हारे पुत्र के साथ राजाकुमारी का विवाह करूँगा। शादी का तुरंत इंतज़ाम करो।"

राजधानी में यह खबर आग की तरह फैल गयी कि महामंत्री के पुत्र के साथ राजकुमारी का विवाह निश्चय हो गया है और दूसरे दिन ही विवाह होनेवाला है।

बुद्धू इस बात का पता लगाने दूसरे दिन राजमहल में पहुँचा कि आखिर राजा उसके साथ क्यों यह अन्याय कर रहा है। तब तक शादी की तैयारियाँ हो चुकी थीं। वर और वधू विवाह-वेदिका पर बैठे थे। पुरोहित का शिष्य बुजुर्गों को अक्षत दे रहा था। उसी वक़्त पुरोहित ने वर के हाथ में मंगल सूत्र देकर वधू के कंठ में बांधने का आदेश दिया। वर मंगल सूत्र बांधने उठ खड़ा हुआ।
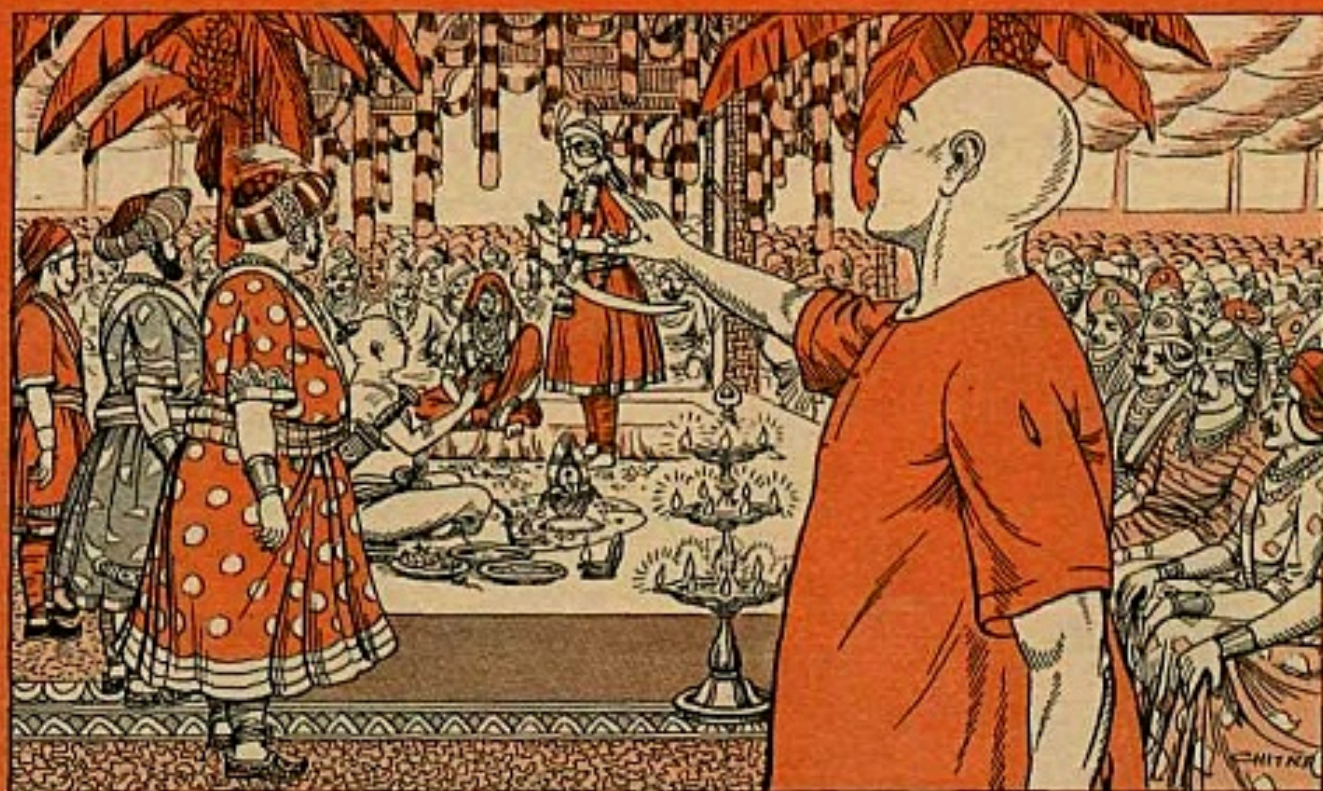
वहाँ पर उपस्थित किसी का ध्यान बुद्धू की ओर न गया।

"ऊँ फट!" बुद्धू जोर से चिल्ला उठा।

बस! और क्या था। जहाँ के लोग, वहीं मूर्तिवत खड़े रह गये। सब चकित हो निर्निमेष बुद्धू को देखते रह गये।

शादी में आये हुए लोग, राज-कर्मचारी आश्चर्य से बोल पड़े–"यह सब क्या हो रहा है!" बुद्धू ने सब को समझाया कि राजा ने उसके साथ कैसे दगा किया है।

"यह तो राजा की ग़लती है। यह शादी नहीं हो सकती। अरे बुद्धू भैया, तुम आपने मंत्र को खोल दो। हम देखेंगे कि राजकुमारी के साथ तुम्हारा विवाह हो जाय!" सबने उसे समझाया।

बुद्धू ने फिर "ऊँ! फट!" कहा।

पुन: सब हिलने लगे। सबके समझाने पर राजा ने बुद्धू के साथ अपनी पुत्री का विवाह वैभव के साथ किया।

"दादाजी, बुद्धू के सर पर बाल नहीं थे न, राजा ने उसके साथ राजकुमारी का विवाह कैसे किया?" बच्चों ने दादा से पूछा।

"अरे, उसके सर पर बाल उग आये थे। नहीं तो क्या राजकुमारी उसके साथ शादी करने को थोड़े ही मानती?" ये शब्द कहते दादाजी नहाने के लिए उठ खड़े हुए।

"दादाजी, यह बताये बिना जा रहे हैं कि बुद्धू के सर पर बाल कैसे उगे?" बच्चों ने फिर पूछा।

"अरे, यह कौन बड़ी बात है। नाटक खेलनेवालों से एक टोपा लिया और उसे सर पर रखकर "ऊँ फट!" कहा। फिर क्या था, वह हमेशा के लिए सर पर चिपक गया। यह भी नहीं जानते। तुम लोग भी कैसे बुद्धू हो।" यह समझाकर दादा नहाने चले गये।
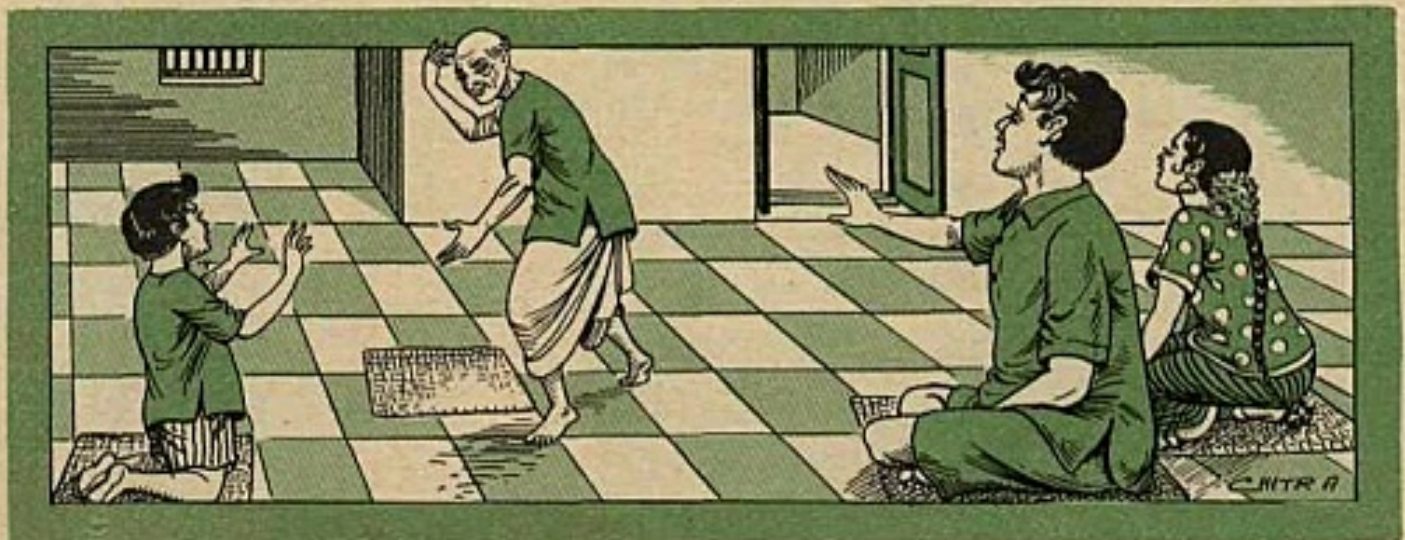
भोली बहू

एक नव वधू पहली बार ससुराल में आयी। काजू से उसे बड़ा प्रेम था। सास की आँख बचाकर वह भण्डार-घर में जाती, काजू का टुकड़ा मुँह में डाल देती। जब भी मौक़ा मिलता, काजू खा लेती। कुछ दिन बीत गये। काजू आधे से ज्यादा गायब था। सास को संदेह हुआ कि इस घर में बहू को छोड़कर और कौन काजू खानेवाला है।

बहू ने समझ लिया कि उसकी चोरी का पता सास को लग गया है। एक दिन वह घर में झाड़ू दे रही थी। फ़र्श पर काजू का एक टुकड़ा पड़ा था। उसे उठा कर हाथ में ले उसकी ओर आश्चर्य के साथ देखते बहू ने सास से पूछा–"सासजी! यह कैसी चीज़ है?"

"ओह, बेचारी! बहू ने तो काजू का चेहरा तक नहीं देखा है! मैंने नाहक उस पर शक किया।" यह सोचते सास पछताने लगी।

मूर्खों की दुनिया

एक गाँव में रामसहाय और सुशीलाबाई नामक दंपति था। उनके बहुत दिन बाद एक लड़का हुआ। उसका भोलानाथ नामकरण किया गया। जब वह छोटा लड़का ही था, तभी उसकी माँ का देहांत हो गया। मातृ हीन उस लड़के को राम सहाय ने बड़े लाड़–प्यार से पाला-पोसा। उसके एक बीघा ज़मीन थी। रामसहाय बड़ी मेहनत करके तरकारी पैदा करता और उसे हाट में बेचकर जो कुछ मिलता, उससे अपने और अपने बेटे का पेट पालता। बच्चे से वह कोई काम न लेता। वह लड़का वक़्त पर खाना खाता और अपने साथियों के साथ मटरगश्ती करके शाम को घर लौटता।

रामसहाय की उम्र बढ़ती गयी। लेकिन भोलानाथ उसे काम में बिलकुल मदद न देता था। यह देख पड़ोसवालों ने रामसहाय से शिकायत की–"तुम लड़के के प्रति हद से ज्यादा लाड़–प्यार जताते हो। उसे बागवानी का काम सिखाओ, वरना वह बिगड़ जायगा।"

लेकिन रामसाहाय अपने लड़के से इतना प्यार करता था कि दूसरों की बातों पर बिलकुल ध्यान न देता था। वह कहता–"लड़के के अभी पंद्रह साल भी तो पूरे नहीं हुए हैं। चार-पाँच साल और बीत जाय तो वह खुद सीख लेगा।"

एक दिन रामसहाय सवेरे तरकारी लेकर जब हाट जाने लगा, तब लड़के को बुलाकर कहा–"बेटा, अगर मेरे लौटने में देरी हो जाय तो बगीचे को सींच देना। नया रस्सा कुएँ के पास ही पड़ा है।"

भोलनाथ ने शाम के होते ही रस्सा लेकर एक छोर को कुएँ में और दूसरा छोर

श्यामधर मिश्र

बगीचे के पास ले जाकर छोड़ दिया। फिर वह खुशी-खुशी अपने साथियों से खेलने चला गया। रामसहाय की तरकारियाँ जल्द ही बिक गयीं, इसलिए वह सूरज के डूबने के पहले ही घर लौट आया।

रामसहाय ने बगीचे के पास जाकर देखा तो अपने लड़के की करनी पर उसे बड़ा क्रोध आया। तब लड़के को बुलाकर बोला-"अरे, मैं ने नहीं सोचा था कि तुम ऐसे मूर्ख हो! मुझे आज तक यह मालूम भी न था कि दुनिया में ऐसे मूर्ख भी होते हैं। मेरे लाड़-प्यार ने ही तुमको मूर्ख बनाया। चाहे जो भी हो, दुनिया में तुम से भी बढ़कर मूर्ख को जब तक मैं न देखूँगा, तब तक मैं घर न लौटूंगा।" यह कहकर रामसहाय दूसरे गाँव के लिए रवाना हो गया।

रामसहाय जब एक गली से होकर गुज़र रहा था, तब मवेशियों की झोंपड़ी में से एक लड़के की चिल्लाहट सुनायी दी। रामसहाय बेतहाशा दौड़कर झोंपड़ी में घुसा तो देखता क्या है, एक गाय के पैरों के पास एक लड़का छटपटा रहा है। उसे देख रामसहाय ने कारण पूछा।
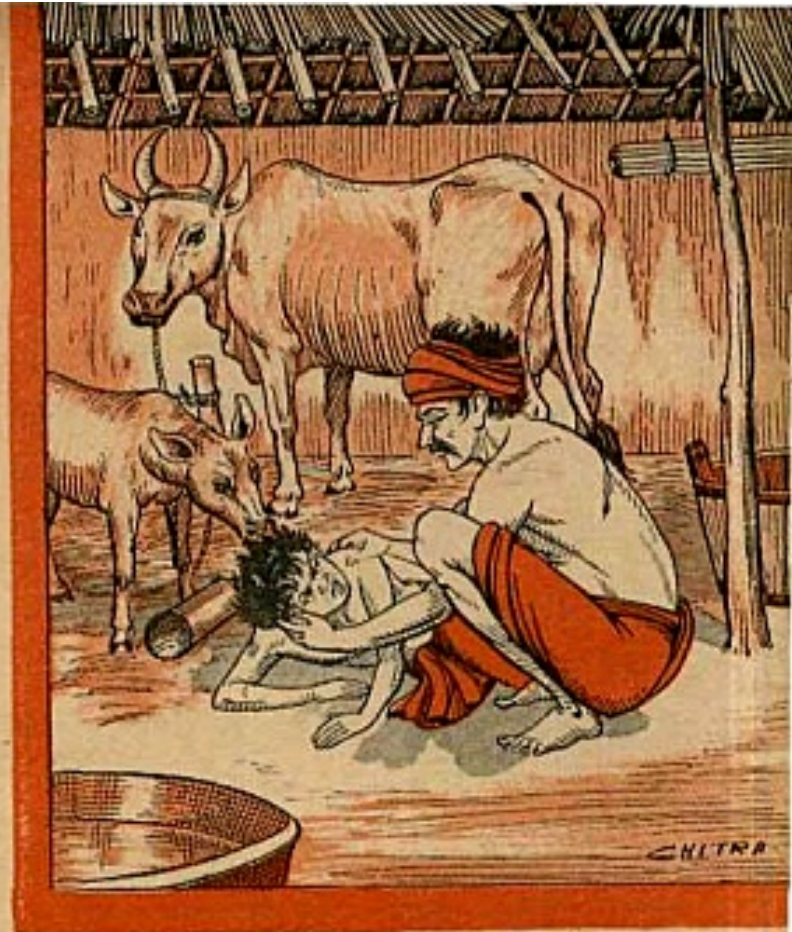
इस पर लड़के ने रोते हुये जवाब दिया-"माँ को बुखार हो आया है। बाप घर पर नहीं है। मेरी माँ ने बताया कि बछड़ा गाय का दूध ज्यादा पीने न पावे और मैं एक बूंद दूध भी नीचे गिराये बिना गाय का दूध दुह डालें! मैं ने देखा कि बछड़ा एक बूंद भी दूध नीचें गिराये बिना दूध पी रहा है, तब मैं ने भी ऐसा ही करना चाहा। तब गाय ने ज़ोर से मुझे लात मारी।"

"यह मेरे लड़के से भी ज्यादा मूर्ख है।" यह सोचकर रामसहाय ने उस

लड़के को दूध दुहने का तरीक़ा सिखाया और दूसरे गाँव में जा पहुँचा।

रामसहाय गाँव में क़दम रखने ही जा रहा था कि उसे एक घर से शोरगुल सुनाई पड़ा। एक औरत चिल्ला रही थी–"बेटा, सर्दी के मारे मेरी जान निकलती जा रही है। जल्दी आग लगा दो।" इसके जवाब में एक लड़का कह रहा था–"चिल्लाओ मत, माँ! मैं आग लगा रहा हूँ।"

रामसहाय ने चकित होकर देखा–एक लड़का जलती लकड़ी लेकर झोंपड़ी में घुसेड़ने जा रहा है। रामसहाय सोचने लगा कि सर्दी लगने से झोंपड़ी में आग लगाना कैसे! तभी उसने उस औरत की आवाज़ सुनी–"जल्दी आग लगाओ, बेटा! झोंपड़ी जल जायगी तो दूसरी बना सकते हैं, लेकिन जान चली जायगी तो थोड़े ही लौटकर आयगी!"

रामसहाय ने लड़के के हाथ से जलती लकड़ी छीन ली और सोचा कि उसके लड़के से भी ये दोनों महामूर्ख हैं। तब उनको समझाया कि जाड़े से बचना है तो अंगीठी में आग जलाना है। उसने आग जलाकर लड़के को सिखाया। तब रामसहाय अपना घर लौटा।

रामसहाय को अब मालूम हुआ कि इस दुनिया में मूर्खों की कमी नहीं है। यह भी समझ लिया कि उसके ज्यादा लाड़-प्यार दिखाने की वजह से ही उसका लड़का मूर्ख बन गया है। दूसरे दिन से ही उसने अपने लड़के भोलानाथ से बगीचे का काम कराना शुरू किया। कुछ ही दिनों में भोलानाथ बागवानी में प्रवीण बना। तब से वह खुद तरकारी पैदाकर हाट में बेच आता। इस तरह वह रामसहाय को आराम पहुँचाने लगा।
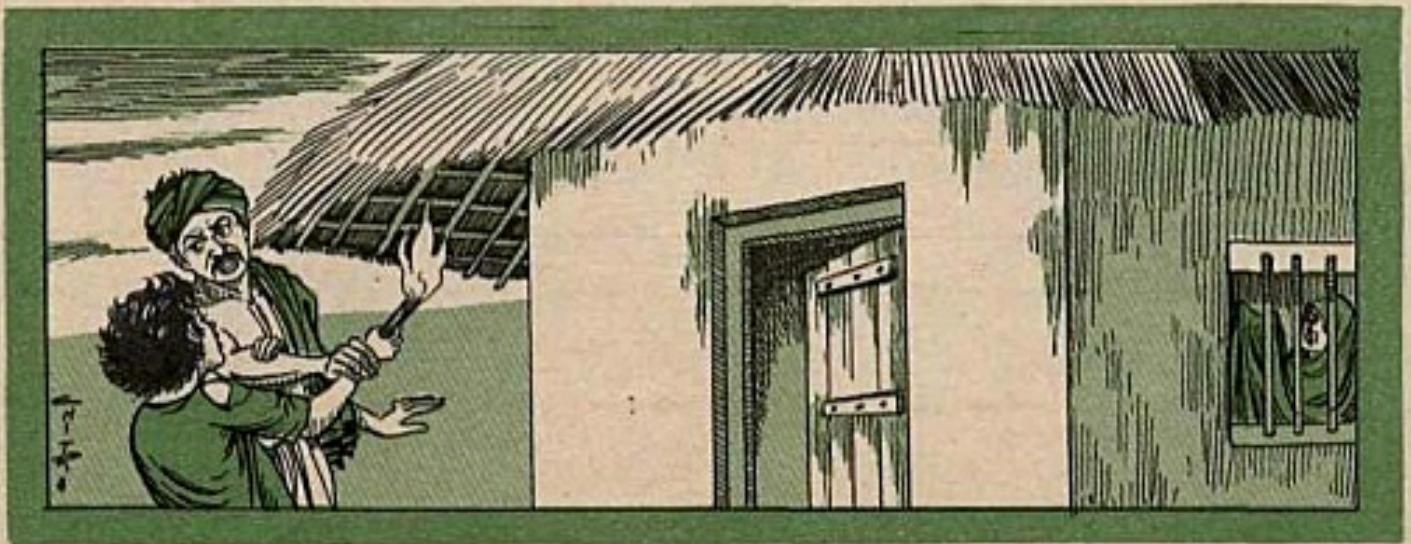
दुष्यंत के बाद भरत राजा बना और कण्व को अपने पुरोहित नियुक्त कर बड़ी कुशलता के साथ शासन किया। भरत के पोते का एक पुत्र था जिसका नाम हस्ति था। इसी के नाम पर हस्तिनापुर की नींव पड़ी। हस्ति के अनंतर पाँचवीं पीढ़ी में कुरु हुआ। उसी के नाम से कुरुक्षेत्र प्रसिद्ध हुआ। कुरु की सातवीं पीढ़ी का प्रतीप था। उसकी पत्नी राजा शिवि की पुत्री सुनन्दा थी। इनके देवापी, शंतनु और वाह्लिक नामक तीन पुत्र हुये। उन में बड़ा पुत्र देवापी राज्य को त्याग कर तपस्या करने चला गया, इसलिए शंतनु राज-गद्दी का हकदार बना और वह गद्दी पर बैठा।

एक दिन राजा शंतनु जंगल में शिकार खेलकर थकने के कारण गंगानदी के तट पर आराम कर रहा था। तब उसे वहाँ पर एक नारी दिखायी दी। उसके रूप-सौंदर्य को देख शंतनु ने सोचा कि वह कोई देवकन्या होगी। वह कन्या भी शंतनु को अपलक नेत्रों से देख रही थी। इसलिए उसने उस कन्या के निकट जाकर पूछा—"सुंदरी, तुम कौन हो? अकेली गंगा के तट पर क्यों घूमती हो?"

"यदि आप मुझ से विवाह करना चाहते हैं तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन मेरा एक नियम है। मेरे किसी भी कार्य को कभी रोकने का आप प्रयत्न करे या निंदा करेंगे तो मैं उसी क्षण

आपको छोड़कर चली जाऊँगी ।" उसकी शर्त को मानकर शंतनु ने उसे अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार किया ।

उनके दांपत्य जीवन में बराबर पुत्र ही पैदा होते रहें । बच्चे के पैदा होते ही वह उसे गंगा में डाल देती । इस से राजा शंतनु को बड़ा दुख होता, लेकिन इस डर से वह गंगा को मना नहीं करता कि उसके मना करने पर वह उसे छोड़कर चली जायेगी । इस तरह सात बच्चों को उसने गंगा में डाल दिये और राजा मौन रहा ।

लेकिन आठवीं बार जब गंगा ने एक पुत्र का जन्म दिया, तब राजा शंतनु को उस बच्चे को गंगा में डलवाने का मन न हुआ । उसने गंगादेवी की निंदा करते हुये कहा–"तुमने अपने सभी बच्चों को गंगा में डाल दिये । क्या कोई भी औरत इतनी निर्दयी हो कर अपनी संतान को अपने ही हाथों से मार सकती है? कम से कम आगे होनेवाले बच्चों को जिंदा रखो! वास्तव में तुम कौन हो? सब बच्चों को इस तरह मारती क्यों हो?"

"तुम यदि पुत्र चाहते हो तो मैं इसे तुमको सौंप देती हूँ । तुमने मुझे रोका, इसलिए मैं तुमको छोड़कर चली जाती हूँ! तुमने मेरा परिचय पूछा । सुनो, बता देती हूँ । एक बार बशिष्ट ने अष्ट वसुओं को मानव के रूप में जन्म धारण करने का शाप दिया । उन्होंने मुझे और तुमको माता-पिता के रूप में माँगा । उनके वास्ते ही मैंने नारी का रूप धारण किया और आज तक तुम्हारी पत्नी बनकर रही । मेरे गर्भ से पैदा हुये वसुओं को शीघ्र उनके लोक में भेजने के ख्याल से मैं उनके पैदा होते ही मारती आयी । इस विचार से मैं इस पुत्र को जिंदा रखती हूँ कि इसे भी मार डालूँ तो तुम पुत्र-हीन हो जाओगे ।" गंगादेवी ने कहा ।
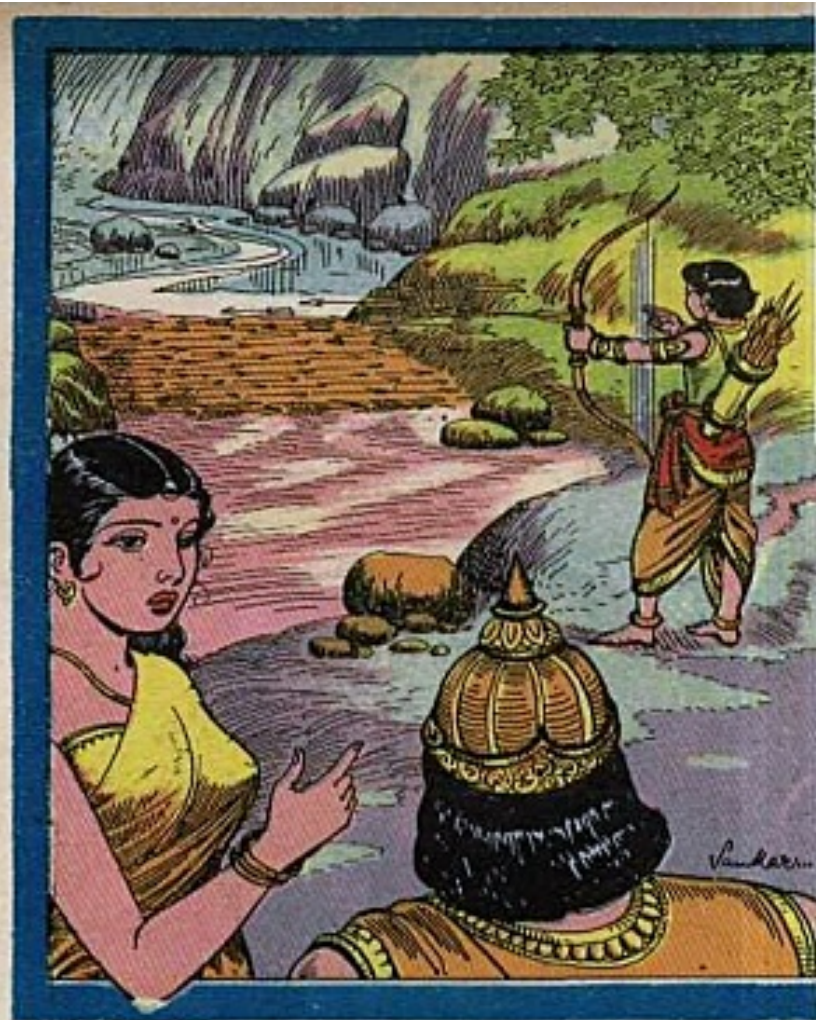
लेकिन गंगादेवी ने उस बच्चे को शंतनु के हाथ न दिया, बल्कि उसके साथ वह अंतर्धान हो गयी। पत्नी और पुत्र को खोकर दुखी हो राजा शंतनु हस्तिनापुर को लौटा। कुछ समय बीत गया। एक दिन वह शिकार खेलते गंगानदी के तट पर आया। गंगा की धारा को पतली देख वह आश्चर्य चकित हो गया। शंतनु ने देखा कि एक युवक बाण चलाते गंगा की धारा को रोक रहा है।

तब गंगादेवी अपने पूर्व रूप में प्रत्यक्ष हुई। उसने उस युवक को दिखाते हुये कहा—"यह युवक तुम्हारा आठवाँ पुत्र है। आज तक इसे पाल-पोस कर मैंने बड़ा किया। इसने वसिष्ठ के पास वेद-शास्त्रों का अध्ययन किया है। पराशर के पास धनुर्विद्या सीखी है। इसका नाम देवव्रत है। इसे तुम अपने साथ ले जा सकते हो।"

राजा शंतनु देवव्रत को अपने साथ हस्तिनापुर ले गया और उसे युवराज बनाकर प्रसन्नता के साथ अपने दिन काटने लगा। चार साल बीत गये। एक दिन शंतनु यमुना के किनारे पर विहार करने गया। वहाँ जिस दिशा से सुगंध आ रही थी, वह उसी दिशा की ओर चला गया। उसे मालूम हुआ कि वह सुगंध एक अनुपम सुंदरी की देह से आ रही है। शंतनु ने उसके निकट जाकर पूछा—"तुम कौन हो? किस की पुत्री हो?"

"मैं दाशराजा की पुत्री हूँ। मेरा नाम मत्स्यगंधी है। मुझे योजनगंधी नाम से भी पुकारते हैं। मैं अपने पिता के आदेश से नाव चलाते यात्रियों को नदी पार कराती हूँ।" उस युवती ने उत्तर दिया।

उसी वक़्त राजा शंतनु दाशराजा के पास पहुँचा और बोला—"मैं तुम्हारी पुत्री के साथ विवाह करना चाहता हूँ।" "आप जैसे राजा मेरे दामाद बने,

देवव्रत ने अपने पिता की चिंता को भांपकर उससे कारण पूछा। शंतनु ने दाशराजा की पुत्री का समाचार सुनाया। तुरंत देवव्रत सदल बल दाशराजा के पास पहुँचा और प्रस्ताव रखा–"आप अपनी कन्या का मेरे पिता के साथ विवाह कीजिये। इससे मुझे बड़ी खुशी होगी।"

इस पर दाशराजा ने जवाब दिया–"महाशय, यह कन्या उपरिचर वसु की पुत्री है। इस कन्या को सौंपते हुए उन्होंने मुझ से कहा था कि योग्य वर के साथ इसका विवाह करूँ! इसका नाम सत्यवती है। असितदेवल ने इस कन्या के साथ विवाह करने की इच्छा प्रकट की, लेकिन मैंने इनकार किया। अगर तुम्हारे पिता विवाह करने को तैयार हैं तो मैं निश्चय ही उनके साथ इस कन्या का विवाह कर सकता हूँ। लेकिन मेरा एक डर है। तुम महा योद्धा हो, वीरश्रेष्ठ हो, सत्यव्रती के गर्भ से पैदा होनेवाले पुत्रों को तुम्हारे समक्ष जीवित रहना मुश्किल है। इसी डर से मैं संकोच करता हूँ।"

इस पर देवव्रत ने दाशराजा से कहा–"तब तो आप मेरी प्रतिज्ञा सुनिये। मुझे अपने पिता के राज्य की आवश्यकता नहीं। इससे बढ़कर मुझे चाहिए ही क्या? लेकिन मेरी एक शर्त है। मेरी पुत्री के गर्भ से पैदा होनेवाला बच्चा आपके बाद राजा बन सके तो मैं अपनी पुत्री का विवाह आपके साथ ज़रूर कर सकता हूँ।" दाशराजा ने उत्तर दिया।

देवव्रत पहले से ही युवराज बन बैठा था। ऐसी हालत में आगे पैदा होनेवाला पुत्र राजा कैसे बन सकता है। इसलिए राजा शंतनु दाशराजा की शर्त को स्वीकार किये विना राजधानी को लौटा। मत्स्यगंधी के साथ उसका विवाह न हो सका. इस चिंता में वह परेशान रहने लगा।

सत्यवती के गर्भ से पैदा होनेवाला पुत्र ही मेरा भी राजा होगा। मैं आप सब के सामने यह शपथ खाकर कहता हूँ।"

दाशराजा ने हँसकर देवव्रत से कहा– "ऐसी प्रतिज्ञा क्या सब कोई कर सकते हैं? तुम भले ही राज्य त्याग दो, लेकिन क्या तुम्हारी संतान चुप रहेगी?"

दाशराजा की बातें सुनकर देवव्रत ने गंभीर होकर कहा–"दाशराज, मैंने राज्य त्यागने की प्रतिज्ञा की, तुम मेरी संतान से डरते हो, इसलिए मैं एक और प्रतिज्ञा कर रहा हूँ कि मैं विवाह ही नहीं करूँगा। मेरी संतान ही न होगी, इसलिए तुम निश्चिंत होकर मेरे पिताजी के साथ सत्यवती का विवाह करो।" दाशराजा ने प्रसन्न होकर एक शुभ मुहूर्त में अपनी कन्या का राजा शंतनु के साथ विवाह किया।

इस प्रकार देवव्रत ने भीष्म प्रतिज्ञा की, इसलिए उसका नाम 'भीष्म' सार्थक हुआ।

राजा शंतनु के सत्यवती के द्वारा चित्रांगद और विचित्रवीर्य नामक दो पुत्र हुए। उनके बचपन में ही राजा शंतनु का देहांत हो गया। भीष्म ने अपने पिता की अंत्येष्ठि क्रियायें कीं। सत्यवती की अनुमति से चित्रांगद को कौरव राज्य की गद्दी पर बिठाया।

चित्रांगद बड़ा पराक्रमी था। वह अपने समकालीन राजाओं तथा वीरों की बिलकुल परवाह नहीं करता था। इसलिए वह हमेशा देवताओं, दानवों और गंधर्वों से युद्ध किया करता था। एक बार चित्रांगद नामक गंधर्व ने इस चित्रांगद को युद्ध के लिए ललकारा। सरस्वती नदी के किनारे दोनों ने भयंकर युद्ध किया। आखिर गंधर्व चित्रांगद ने अपनी माया के बल पर कौरव वंशी चित्रांगद का वध किया।

चित्रांगद की मृत्यु पर भीष्म को बड़ा दुख हुआ और उसकी जगह विचित्रवीर्य को गद्दी पर बिठाया। विचित्रवीर्य

परिचय कराया जा रहा था। तब भीष्म ने आगे बढ़कर कहा–"मैं इन कन्याओं को अपने भाई के साथ विवाह करने ले जा रहा हूँ। इनको छुड़ाने की जो राजा ताक़त रखता है, वह मेरे साथ युद्ध करके विजयी बने।" इसके बाद अंबा, अंबिका व अंबालिका को अपने रथ पर बिठाया।

सब राजा एक साथ भीष्म पर टूट पड़े। भीष्म ने कुछ राजाओं को मार गिराया, कुछ राजाओं को घायल बनाया और काशी राजा की पुत्रियों को साथ ले हस्तिनापुर के लिए रवाना हुए। अंत में साल्व ने भीष्म का सामना किया और अपनी जान लेकर भाग खड़ा हुआ।

हस्तिनापुर में पहुँचते ही भीष्म ने सत्यवती की सलाह लेकर काशी राजा की पुत्रियों का विचित्रवीर्य के साथ विवाह करने का निश्चय किया। इस पर अंबा ने कहा–"मैंने इसके पूर्व ही साल्व को वर लिया है। वे भी मुझ से प्रेम रखते हैं। स्वयंवर अगर ठीक से चलता तो मैं ज़रूर उनको वर लेती। मुझे असहाय बनाकर आप यहाँ ले आये। अब भी सही, मेरी इच्छा की पूर्ति करना आपका कर्तव्य है।"

नाबालिग था। इसलिए उसकी तरफ़ से राज्य-संभालने के लिए सत्यवती ने भीष्म को अनुमति दी। विचित्रवीर्य भी भीष्म की सलाहों का पालन करते राज्य चलाने लगा।

कुछ साल बाद विचित्रवीर्य विवाह के योग्य हो गया। उसी समय काशी के राजा ने अपनी पुत्रियों–अंबा, अंबिका व अंबालिका–के स्वयंवर का ढिंढोरा पिटवाया। यह समाचार भीष्म सत्यवती को सुनाकर रथ पर काशी के लिए रवाना हुए। स्वयंवर में भाग लेने कई राजा आये। भीष्म भी वहाँ पहुँचे। काशी राजा की पुत्रियों को स्वयंवर में आये हुए राजाओं का
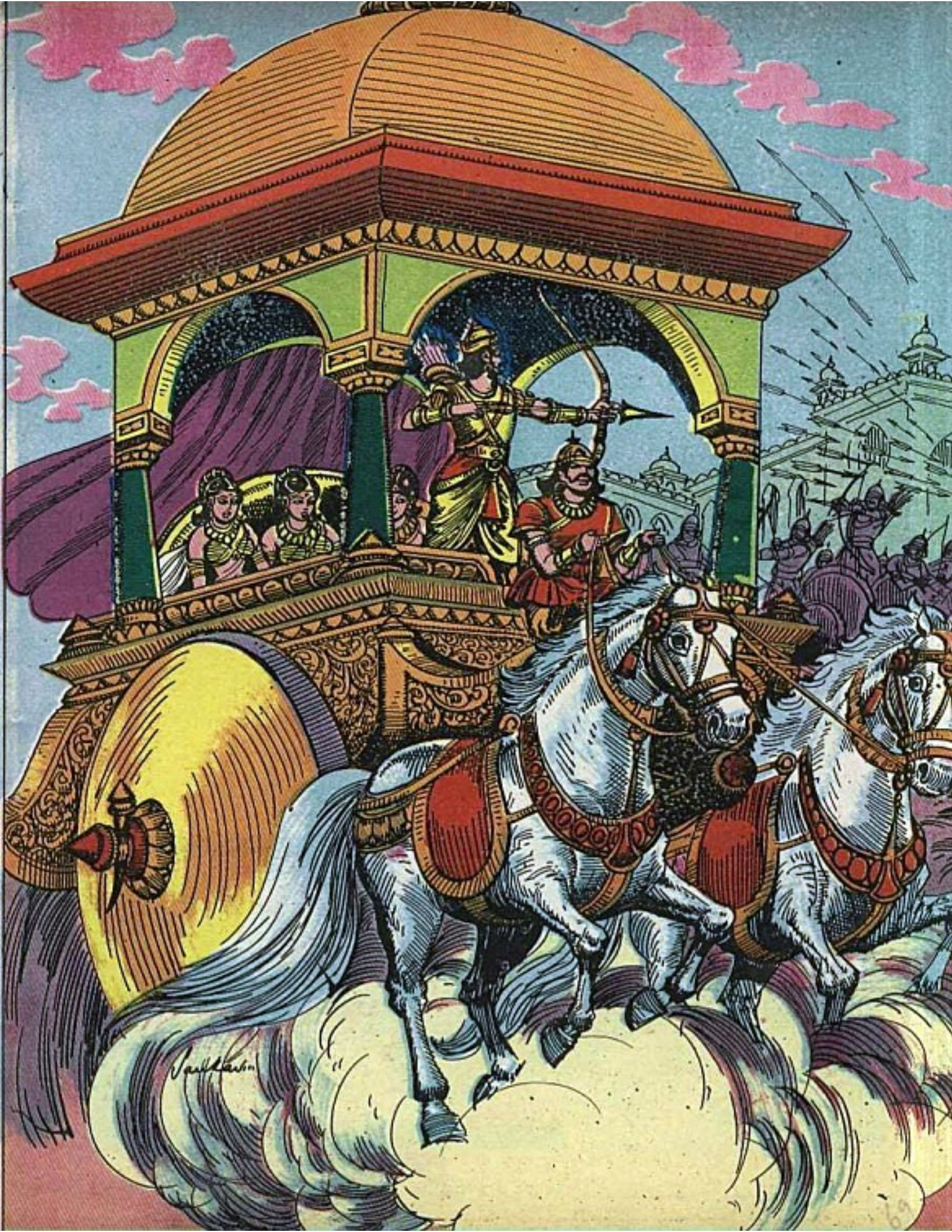
भीष्म ने मंत्रियों, पुरोहितों व बंधु-बांधवों के साथ परामर्श किया और उनकी अनुमति लेकर अंबा को साल्व के पास भेज दिया। अंबिका और अंबालिका का विवाह विचित्रवीर्य के साथ किया।

अंबिका और अंबालिका के साथ विवाह करने के बाद विचित्रवीर्य उनके प्रेम में इस तरह मग्न हो गया कि राज-व्यवहारों को भुलाकर अपनी पत्नियों के साथ समय काटने लगा। काल-प्रवाह में वह यक्ष्मा का शिकार हो मर गया।

भीष्म ने अपने छोटे भाई की अंत्येष्ठिक्रियाएँ कीं और पुत्र के शोक में विलाप करनेवाली सत्यवती को सांत्वना दी।

कुछ समय बीतने के बाद सत्यवती ने भीष्म से कहा–"भीष्म, तुम अपने पिता के वंश की बेल को आगे बढ़ाने और श्राद्ध करने के लिए अकेले बच गये हो। अंबिका और अंबालिका के द्वारा तुम संतान पैदा करो। यदि यह कार्य तुमको पसंद नहीं, तो दूसरी योग्य कन्या से विवाह कर वंश की रक्षा करो।"

भीष्म ने सत्यवती की बात नहीं मानी। उन्होंने कहा–"मैं अपनी प्रतिज्ञा भंग नहीं कर सकता। इंद्र-पद देने का लोभ भी दिखाया जाय तब भी मैं अपने निर्णय को बदल नहीं सकता। तुमने जो धर्म की बात कही, वह अधर्म है। कठिनाइयों के समय एक और धर्म का आश्रय लिया जाता है, किंतु उसका भी पालन करने के पहले बुजुर्गों, मंत्रियों व विद्वानों की सलाह लेना जरूरी है। वंश की रक्षा के लिए तुम्हारी बहुएँ उत्तम ब्राह्मणों के द्वारा संतान पा सकती हैं। प्राचीन काल में परशुराम ने जब विश्व के सभी क्षत्रियों का वध किया तब उन मृत राजाओं की पत्नियों ने उत्तम ब्राह्मणों के द्वारा संतान पाकर क्षत्रिय वंशों की रक्षा की है। हम भी उस नियम का पालन कर सकते हैं।"
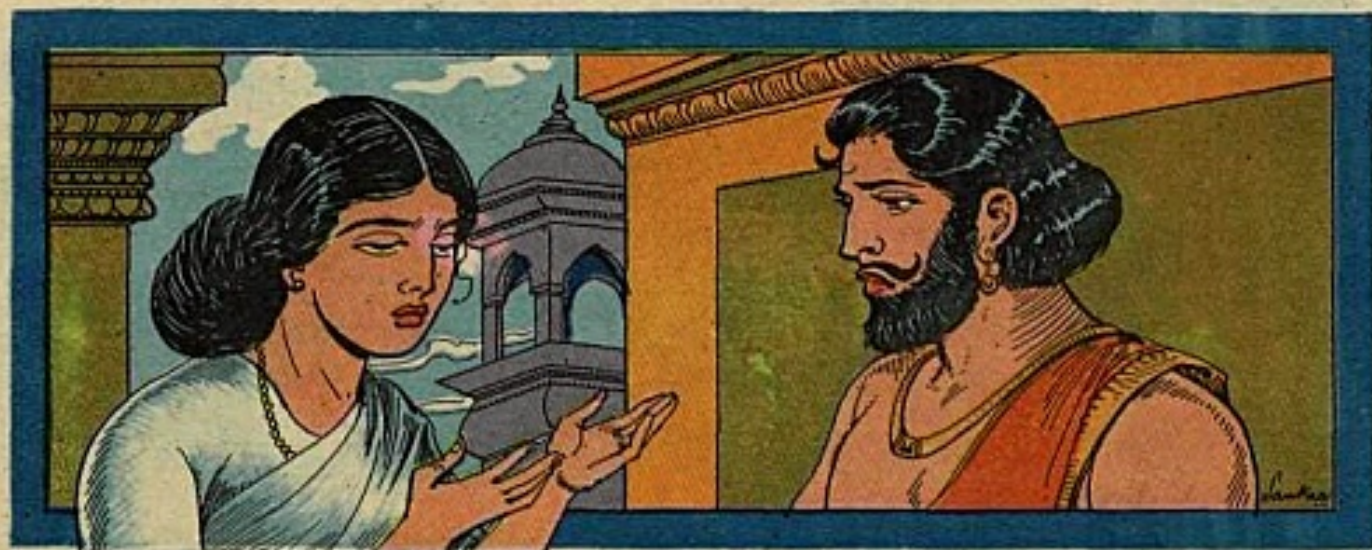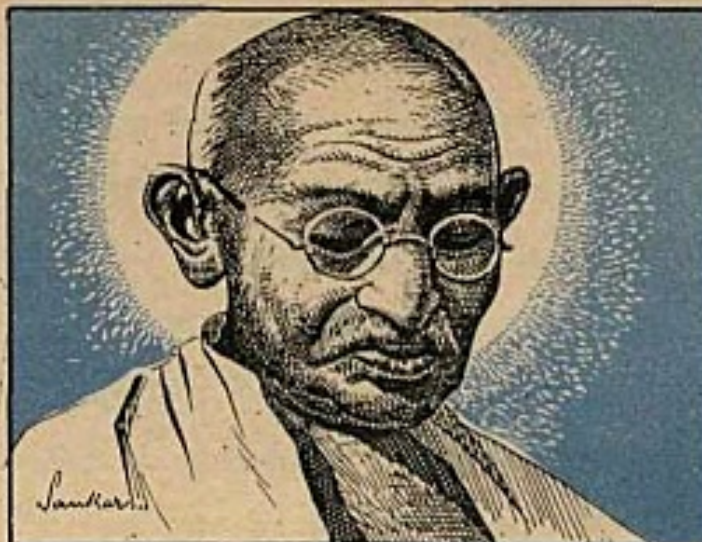
[४]

प्रिटोरिया जानेवाले रास्ते में गांधीजी ने गोरे लोगों के अहंकार का अच्छा अनुभव किया। जब गाड़ी मरिट्जबर्ग पहुँची, तब रेल्वे अधिकारियों ने गांधीजी को प्रथम श्रेणी के डिब्बे से जबर्दस्ती उतार दिया। अब्दुल्ला ने कभी गांधीजी से नहीं बताया था कि दक्षिण आफ्रिका में भारतीय कैसी यातनाएँ झेल रहे हैं और कैसे अपमान का सामना कर रहे हैं। गांधीजी सोचने लगे कि इस नौकरी के लिए उन्हें इन अपमानों का सामना करना है या नौकरी छोड़ भारत जाना है? जहाँ भी जावे, उन्हें इन तक़लीफ़ों का सामना करना ही पड़ेगा। चाहे जो भी हो, इसका सामना करना ही होगा। गांधीजी ने यह निश्चय करके अपनी यात्रा चालू की।

चालस्टन के पास रेल की यात्रा रुक गयी। वहाँ से स्टाण्डर्टन नामक शहर तक उन्हें घोड़ा गाड़ी में यात्रा करनी थी। गाड़ी में सब गोरे थे। गांधीजी को कोचवान के बाजू में बैठने का आदेश हुआ। थोड़ी दूर जाने के बाद उन्हें फुटबोर्ड पर खड़े होने का आदेश मिला। गांधीजी ने इसका विरोध किया। गाड़ीवान गोरा था। 'काले में इतना अहंकार!' यह कहते कोचवान गांधीजी को पीटने लगा। गांधीजी मार सहते रहे लेकिन अपनी जगह से हिले तक नहीं। बाक़ी गोरों ने कोचवान को रोका।

स्टाण्डर्टन पहुँचने पर कुछ भारतीय व्यापारियों ने गांधीजी से मिलकर कहा कि ट्रान्सवाल में भारतीयों का इस तरह अपमान सहना मामूली बात हो गयी है। जोहान्स

बर्ग पहुँचने पर ग्रैण्ड नैशनल होटल में गांधीजी से बताया गया कि वहाँ पर गोरों को ही प्रवेश मिल सकता है। वहाँ से प्रिटोरिया के लिए प्रथम श्रेणी का टिकट ख़रीदना भी मुश्किल हो गया। स्टेशन मास्टर ने पहले टिकट देने से ही इनकार किया। गोरे सहयात्री अगर गांधीजी का समर्थन न करते तो उन्हें प्रथम श्रेणी के डिब्बे से ज़बर्दस्ती उतार देते।

डर्बन से प्रिटोरिया तक की यात्रा करने में उन दिनों में पांच दिन लगते थे। इन पांच दिनों में गांधीज़ी ने दक्षिण आफ्रिका के भारतीयों की हालत का अच्छा अनुभव प्राप्त किया। भारतीय व्यापारी इन अपमानों के आदी हो गये थे। लेकिन गांधीजी के लिए यह एक नया अनुभव था। उनकी अंतरात्मा में एक नया साहस आवेश कर गया। उस जाड़े की रात में मरिट्जबर्ग के स्टेशन में ग़ांधीजी ने निर्णय किया कि दक्षिण आफ्रिका में भारतीयों के प्रति जो अन्याय हो रहे हैं, उनका सामना करना चाहिये। शासकवर्ग में जो सहज मानवता है, उसे जागृत करनी है। यह केवल उनकी समस्या नहीं, संपूर्ण मानव जाति की है। दक्षिण आफ्रिका के भारतीयों में चेतनता का अभाव है। वे अपने अधिकारों के लिए लड़ने की स्थिति में नहीं हैं।

जो गांधीजी अदालत में पैरवी करते समय अपनी दृढ़ता का परिचय न दे सके, वे ही, प्रिटोरिया में पहुँचते ही बदल गये। वहाँ के भारतीयों को एक जगह इकट्ठा करके उन्हें ट्रान्सवाल के भारतीयों की हालत समझायी। यह सलाह दी कि भारतीयों की कठिनाइयों को सारे संसार के सामने रखने के लिए एक संस्था की स्थापना करना आवश्यक है। जो लोग अंग्रेज़ी सीखना चाहते हैं, उनके लिए वे ख़ुद अंग्रेज़ी सिखाने के लिए तैयार

हो गये। एक नाई, एक गुमाश्ता और एक छोटा-सा दुकानदार उनके प्रथम शिष्य बने।

प्रिटोरिया के समस्त भारतीयों के साथ गांधीजी का परिचय हुआ। उन्होंने वहाँ के भारतीयों की कठिनाइयाँ ब्रिटीश एजेंट के सामने रखीं। ब्रिटीश एजेंट ने बड़ी सहानुभूति से गांधीजी की बातें सुनीं और कहा—"ट्रान्सवाल बोयर राज्य के अंतर्गत है। इसलिए मैं कुछ नहीं कर सकता।"

बोयर राज्य की सरकार ने आरेंज फ्रीस्टेट से कई प्रवासी भारतीयों को वहाँ से भगा दिया था। ऐसा लगता था कि दक्षिण आफ्रिका में एक भी प्रतिष्ठित भारतीय के लिए कोई स्थान नहीं है। गांधीजी के सामने यही कठिन समस्या बन गयी कि इस हालत को कैसे सुधारें।

वे दक्षिण आफ्रिका में जिस काम के लिए गये थे वह एक मुक़द्दमे से संबंधित था। यह मुक़द्दमा दो धनी भारतीयों के बीच चल रहा था। उनमें एक नेटाल से संबंधित अब्दुल्ला था और दूसरा ट्रान्सवाल का त्यायब सेठ था। ये दोनों ४० हज़ार पौण्ड को लेकर झगड़ा करते एक दूसरे का अंत देखने पर तुले हुये थे। इस मुक़द्दमे में गांधीजी का काम अब्दुल्ला का हिसाब देखना और वकीलों से बात करना था। हिसाब गुजराती भाषा में थे। उनका अंग्रेजी में अनुवाद करके मुक़द्दमे पर निगरानी रखना था।

साल भर यह काम देखने के बाद गांधीजी को लगा कि वकील का काम कोई बड़ा काम नहीं है। उन्हें मालूम हुआ कि वकील केवल चलाकी से बात करने से विजयी नहीं होते, बल्कि गवाही का आधार लेकर सचाई पर विजयी होते हैं। जिसके पक्ष में सचाई होगी, फ़ैसला भी उसके अनुकूल होगा। खोज-बीन करने पर गांधीजी को लगा कि अब्दुल्ला का

पक्ष न्यायपूर्ण है। लेकिन ज्यों ज्यों मुक़द्दमा लड़ने जायेंगे, त्यों त्यों दोनों पक्षों का भारी नुक़सान होगा। वैमनस्य के बढ़ने के साथ पानी की तरह धन खर्च करना पड़ेगा। इसलिए दोनों में समझौता करना उचित होगा। बड़ी मुसीबत के बाद दोनों दल समझौते के लिए तैयार हो गये।

समझौता अब्दुल्ला पक्ष के अनुकूल हुआ। उस फ़ैसले को तुरंत अमल करने से त्यायब सेठ का दिवाला निकल जाता। इसलिए गांधीजी ने उससे किश्तों में रुपये लेने के लिए अब्दुल्ला को मनवाया। उस वक़्त गांधीजी को भलीभांति विदित हुआ कि वकील का काम दोनों दलों में समझौता करना भी है।

मुक़द्दमे का फ़ैसला होते ही गांधीजी का कार्य समाप्त हो गया। जहाज़ पर सवार हो भारत जाने का संकल्प करके गांधीजी प्रिटोरिया से डर्बन आये। अब्दुल्ला ने गांधीजी की बिदाई में एक दावत का इंतज़ाम किया। उस दावत में गांधीजी ने एक पत्रिका में एक समाचार पढ़ा। वह समाचार था कि नेटाल में निवास करनेवाले भारतीयों को मतदान के अधिकार से वंचित रखने के लिए नेटाल की विधान सभा में एक प्रस्ताव रखने जा रहे हैं।

अब्दुल्ला तथा दावत में आये हुये अन्य व्यापारियों को यह समाचार बिलकुल मालूम न था। वे अंग्रेज़ों के साथ बात करने के लिए आवश्यक अंग्रेज़ी मात्र जानते थे, लेकिन अखबार पढ़कर समझने की अंग्रेज़ी वे जानते न थे। अलावा इसके वे केवल व्यापार करने आये थे; अतः राजनीति में उनकी कोई रुचि न थी। वे यह नहीं जानते थे कि राजनीति और, उनके व्यापार के साथ कोई संबंध भी है। इसके पहले ही आरेंज फ्रीस्टेट से भारतीय व्यापारियों को भगा दिया गया था। नेटाल भी उसी प्रकार का वर्ण-भेद आपनाने जा रहा था।

९१. प्राचीन रोम का मंदिर

ट्युनिशिया (उत्तर आफ्रिका) की रोमन इमारतों में प्रसिद्ध यह इमारत डूग्गा नामक प्रदेश में है। यह एक मंदिर है जो जूपिटर, जूनो, और मिनर्वा नामक देवताओं के वास्ते निर्मित है। चित्र में इस मंदिर का मण्डप दिखायी देता है। इस में ४३ फुट ऊँचे संगमरमर के स्तम्भ लगे हैं। मार्कस आरिलियस के शासन काल में (ई. सन. १६६–१६९) इसका निर्माण हुआ है। बाइजांटैन के साम्राज्य काल में इसका उपयोग दुर्ग के रूप में हुआ है।